राज्यसभा चुनाव

देश के तीन राज्यों- उत्तर प्रदेश, हिमाचल और कर्नाटक से राज्यसभा के पंद्रह सदस्यों के लिए चुनाव में विभिन्न पार्टियों के विधायकों के पाला बदलने की घटनाएं न तो पहली हैं और न ही ये आखिरी होंगी। मगर ऐसी घटनाएं राजनीतिक कौतुक चाहे जितना पैदा करें, इनकी सराहना नहीं की जा सकती, क्योंकि ये हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनता के भरोसे को कमजोर करती हैं। चाहे वे सपा के विधायक हों या कांग्रेस के या भाजपा या सुभासपा के, इन तमाम पालाबदल विधायकों की आस्था यदि अपने-अपने दल में खत्म हो गई थी, तो उन्हें अपनी विधायकी से इस्तीफा देकर नया जनादेश लेना चाहिए था, पर कोई विरले ही अब ऐसा उदाहरण पेश कर पाता है। ऐसा नहीं है कि किसी दल से विधायक या सांसद चुने जाने के बाद कोई व्यक्ति अगले पांच वर्षों के लिए बौद्धिक रूप से गुलाम बन जाता है, बल्कि विधायी सदस्य देशहित और जनहित में पार्टी लाइन के विरुद्ध बोलने को पूर्ण आजाद हैं और संविधान उन्हें इसका अधिकार देता है। हमारी संसदीय बहसों में ऐसी अनगिनत नजीरें मौजूद हैं, जब सांसदों-विधायकों ने विभिन्न मुद्दों पर पार्टी लाइन के विरुद्ध अपनी राय रखी। भारतीय लोकतंत्र की वैश्विक प्रतिष्ठा में इन असहमत आवाजों का कहीं बड़ा योगदान है। जाहिर है, ऐसे सदस्य अपने मजबूत नैतिक बल के सहारे ही मुखर होते हैं, मगर दुर्योग से हाल के वर्षों-दशकों में सत्ता या स्वार्थ-सिद्धि के लिए जोड़-तोड़ की कोशिशें ही अधिक दिखी हैं।

इन चुनावों का कुलजमा पैगाम यही है कि लोकतंत्र में राजनीतिक प्रबंधन और जीत की भूख के बिना मुकाबले में टिकना भी मुश्किल होता है।

बहरहाल, पाला बदलने वाले सदस्यों के आचरण से इतर ये राज्यसभा चुनाव राजनीतिक दलों के प्रबंध कौशल को भी उजागर कर गए। खासकर कांग्रेस और समाजवादी पार्टी के लिए इन नतीजों में गहरे सबक हैं। अव्वल तो सपा के प्रत्याशियों के चयन से ही सहयोगी दलों की नाराजगी खुलकर सामने आ गई थी, फिर इतनी बड़ी संख्या में पार्टी के विधायकों का दामन झटकना साफ बताता है कि नेतृत्व ने उनको भरोसे में नहीं लिया था। आखिर उन्हें संतुष्ट करने की जिम्मेदारी किसकी थी? जब भाजपा ने अपना आठवां उम्मीदवार उतार दिया था, क्या तभी पार्टी नेतृत्व को अतिरिक्त सक्रियता नहीं दिखानी चाहिए थी? हैरानी की बात है कि पार्टी के मुख्य सचेतक की ही प्रतिबद्धता डांवाडोल थी और नेतृत्व इससे गाफिल था? इससे भी बुरा हाल तो हिमाचल में कांग्रेस का रहा। उत्तर भारत में यहां उसकी इकलौती सरकार है और 68 सदस्यीय विधानसभा में उसके पास 40 विधायक हैं, फिर भी उसके उम्मीदवार की जो दुर्गति हुई, वह पार्टी नेतृत्व की कमजोरी को बुरी तरह उजागर कर गई। वहां उसकी सरकार ही अब संकट में है। ऐसे में, वह राज्य से लोकसभा की चार सीटों के लिए कोई उम्मीद कैसे पाल सकती है?

आम चुनाव हो या विधानसभा चुनाव, उनके करीब आने पर विधायकों, सांसदों और नेताओं का पाला बदलना सामान्य बात है। मगर राज्यसभा चुनावों के लिए भाजपा व एनडीए की मोर्चेबंदी बताती है कि वे किस लक्ष्य से प्रेरित हैं और उच्च सदन में भी अपना बहुमत हासिल करने को लेकर सत्तारूढ़ गठबंधन कितना गंभीर है। गौरतलब है कि अभी तक एनडीए को राज्यसभा में बहुमत नहीं है, फिर आम चुनाव से ठीक पहले विपक्ष से सीटें झटककर वह मतदाताओं को यह संदेश देना चाहता है कि उसका कोई मुकाबला ही नहीं है। इन चुनावों का कुलजमा पैगाम यही है कि लोकतंत्र में राजनीतिक प्रबंधन और जीत की भूख के बिना मुकाबले में टिकना भी मुश्किल है। हिमाचल कांग्रेस अपनी ही पार्टी की कर्नाटक इकाई से यह सीख ले सकती है।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 27 फरवरी, 1949

निजाम ने की पटेल की अगवानी

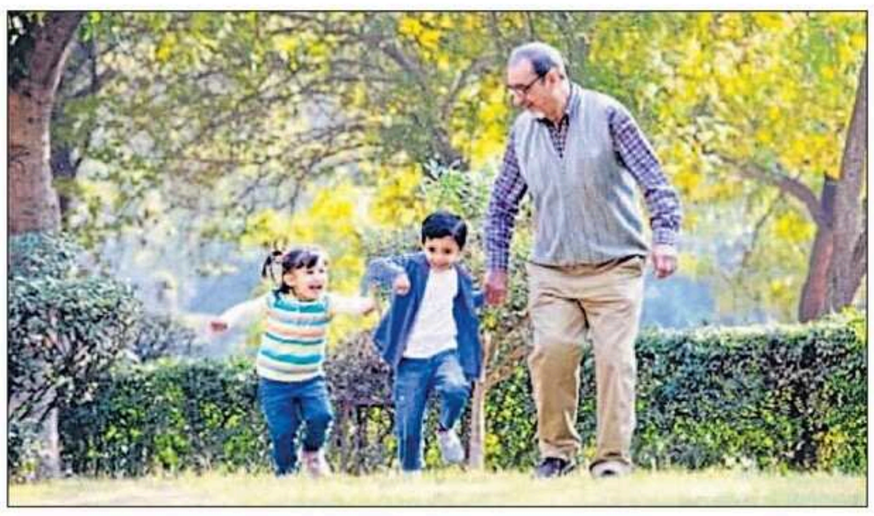

हैदराबाद, २६ फरवरी। भारत के उप-प्रधानमंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल आज प्रातःकाल बंगलोर से यहां आ गये। हकीमपेट हवाई अड्डे पर निजाम हैदराबाद, सैनिक गवर्नर जनरल चौधरी, निजाम के सुपुत्र और सैनिक एवं असैनिक अधिकारी मौजूद थे। निजाम ने हवाई अड्डे पर सरदार वल्लभभाई पटेल का स्वागत करके एक अन्य परंपरा को भंग किया है। वे पहली बार हवाई अड्डे पर एक भारतीय का स्वागत करने के लिये गये थे। भूतकाल में केवल वायसरायों को यह सम्मान प्राप्त था। निजाम एक सादा पोशाक पहने हुए थे। वे हवाई अड्डे पर सरदार पटेल के हवाई जहाज के आने से १५ मिनट पहले पहुंच गये थे। यहां सैनिक गवर्नर ने उनका स्वागत किया। रियासती विभाग के सलाहकार श्री वी.पी. मेनन ने सरदार पटेल से निजाम को मिलवाया तो सरदार पटेल ने उनसे हाथ मिलाया। सेना का अभिवादन स्वीकार करने के बाद सरदार पटेल से बरार के युवराज और राजकुमार मुअज्जम मिलवाये गये। हैदराबाद राज्य कांग्रेस के नेता भी उपस्थित थे। इसके बाद सरदार पटेल, कुमारी मणिवेन पटेल और सैनिक गवर्नर के साथ बोलाराम रेजीडेन्सी में चले गये। हकीमपेट हवाई अड्डे पर कड़ा सैनिक पहरा था और जनता को सावधानी के तौर पर सड़क पर खड़ा नहीं होने दिया गया था।

हैदराबाद कांग्रेस की गुत्थी सुलझी- हैदराबाद, २६ फरवरी। ''हैदराबाद राज्य कांग्रेस की उलझन सुलझ गई है।'' यह राज्य कांग्रेस के अध्यक्ष स्वामी रामानंद तीर्थ ने एक वक्तव्य में घोषित किया है। वक्तव्य में उन्होंने कहा है- ''लोगों को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि हैदराबाद राज्य कांग्रेस की उलझन सरदार पटेल के आने से पूर्व ही सुलझ गई है। कांग्रेस कार्यसमिति के कुछ सदस्यों ने दूसरे लोगों के लिए स्थान रिक्त कर दिया है। उन्होंने भूतकाल में जो सहायता दी है उसके लिए मैं बहुत ही कृतज्ञ हूं। परिणाम से मैं प्रसन्न हूं। राज्य कांग्रेस के विभिन्न तत्व अब एक हैं।'' इससे पहले की खबर में कहा गया है कि श्री जनार्दनराव देसाई ने श्री मेनन के सम्मुख यह कहा है कि उनका दल राज्य कांग्रेस की कार्यसमिति के निर्माण में स्वामी रामानंद तीर्थ को पूरी छूट देने के लिए तैयार है। वह वर्तमान स्थितियों में एक संतुलित कार्यसमिति के निर्माण के बारे में उनकी सद्भावना पर भरोसा करता है।

देश की समृद्धि का एक और संकेत

यहां स्कैन करें

अरुण कुमार | वरिष्ठ अर्थशास्त्री

सवाल है, आगे की हमारी रूपरेखा क्या हो? हमें अब कैसे कदम उठाने चाहिए, ताकि समृद्ध होते भारत की राह और आसान हो? इसके लिए बेरोजगारी और कम करने के प्रयास होने चाहिए।

भारतीय परिवारों के मासिक खर्च का औसतन लेखा-जोखा बताने वाले पारिवारिक उपभोग व्यय सर्वेक्षण : 2022-23 के आंकड़े समद्ध होते भारत के संकेत देते हैं। राष्ट्रीय सैंपल सर्वेक्षण कार्यालय, यानी एनएसएसओ द्वारा जारी इस रिपोर्ट में बताया गया है कि महंगाई से तुलनात्मक अध्ययन न किए जाने के बावजूद, यानी 'रियल टर्म' में भी पिछले दस वर्षों में भारतीय परिवारों की दशा सुधरी है। 2011-12 में शहरी क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च औसतन 2,630 रुपये मासिक था, जो बढ़कर 3,510 रुपये हो गया है। इसी तरह, ग्रामीण क्षेत्र में इसमें करीब 600 रुपये की वृद्धि हुई है और यह 2011-12 के 1,430 रुपये की तुलना में बढ़कर 2,008 रुपये हो गया है।

यह सर्वे ढाई लाख से अधिक परिवारों पर किया गया था, जिनमें से करीब डेढ़ लाख घर ग्रामीण इलाकों के थे, जबकि एक लाख से अधिक शहरी भारत के। इसमें एक अच्छी बात यह भी पता चली है कि खाद्य पदार्थों पर हमारा खर्च पहले की तुलना में कम हुआ है, और हम कपड़े, टीवी, मनोरंजन आदि मदों पर ज्यादा खर्च करने लगे हैं। यह रिपोर्ट कहती है कि ग्रामीण क्षेत्रों में खाने-पीने की चीजों पर हमारा प्रति व्यक्ति उपभोग खर्च औसतन 46 प्रतिशत मासिक है, जबकि शहरों में 39 प्रतिशत। शायद यही वजह है कि देश में गरीबी के घटने की मुनादी भी की जा रही है। हालांकि, गरीबी की हकीकत जानने के लिए हमें कुछ अन्य आंकड़ों की भी दरकार है।

एनएसएसओ की इस रिपोर्ट में मोटा-मोटा अनुमान लगाया गया है। गरीबी की पूरी तस्वीर जानने के लिए इसे और स्थानीय बनाना होगा, यानी व्यक्तिगत आंकड़े भी पता करने होंगे। तभी जानकारी हो सकेगी कि गरीबी कहां कम हुई है और कहां नहीं। इसी तरह, इसमें घरेलू बजट को प्रतिशत में जरूर बताया गया है, लेकिन हमें यह भी पता करना होगा कि कहीं बढ़ती महंगाई से इसका सीधा संबंध तो नहीं। मुमकिन है कि उत्पादों के दाम बढ़ रहे हों, जिसके कारण उपभोग कम होने के बावजूद खर्च ज्यादा दिख रहा हो। इसे ऐसे समझ सकते हैं कि यदि खाने-पीने की चीजों के दाम बढ़ जाएं, तो हमारा खर्च बेशक बढ़ेगा, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं निकलेगा कि हमारा उपभोग भी बढ़ गया है। यानी, खपत होने वाले उत्पादों की मात्रा के आधार-आंकड़े सामने आने पर गरीबी कम होने का पता चल सकेगा। इसी से जुड़ा है, स्वास्थ्य और आवागमन पर खर्च। हमें नहीं पता कि ये खर्च क्यों बढ़े? क्या इसकी वजह स्वास्थ्य सेवाओं का महंगा होना या कमाने के लिए दूर तक यात्रा करना तो नहीं?

एक और चीज इन सबसे जुड़ी है, वह है, गरीबी की मानक परिभाषा। आज यह तय करना निहायत जरूरी है कि वर्तमान समय में हमें कितना उपभोग करना चाहिए कि हम गरीबी-रेखा से ऊपर चले जाएं। स्थान व समय के हिसाब से यह मानक बदलता रहता है। मसलन, पहाड़ी इलाकों में जीने की बुनियादी जरूरतें मैदानी इलाकों से अलग होंगी। अमेरिका में तो प्रति व्यक्ति आय हमसे तकरीबन 30 गुना अधिक है, फिर भी अमेरिकी समाज के हिसाब से वहां गरीब हैं, क्योंकि वहां की जरूरत गरीबी को अलग रूप में परिभाषित करती है। इसी कारण, विश्व बैंक की गरीबी-रेखा की परिभाषा बदलती रहती है। पिछले साल उसने रोजाना 1.9 डॉलर से अधिक कमाने वाले को गरीबी के दायरे से बाहर रखा था, इस साल उसने आमदनी की इस सीमा को बढ़ाकर 2.15 डॉलर रोजाना कर दिया है। हम भी साल 1962 या 1993 की परिभाषा के अनुसार आज की गरीबी तय नहीं कर सकते।

आज बेशक किसी रिक्शा वाले के हाथ में मोबाइल दिख जाता हो, लेकिन उसको गरीब न मानना मुश्किल है। लिहाजा, भारतीय परिस्थितियों के संदर्भ में गरीबी की आदर्श परिभाषा यह होनी चाहिए कि जिस व्यक्ति का खान-पान, वेश-भूषा आदि अच्छा हो, जिसके पास घर हो और अच्छी स्वास्थ्य सेवाओं तक जिसकी पहुंच हो, वह गरीब नहीं है। इसके अलावा, हमें उपभोग की असमानता दूर करने के बजाय आय असमानता घटाने पर जोर देना चाहिए, क्योंकि उपभोग की तुलना में आय में गैर-बराबरी ज्यादा होती है। समृद्धि का भी यही हाल है, क्योंकि बचत वही करते हैं, जिनकी आमदनी अधिक होती है। लिहाजा, उपभोग के आंकड़ों से ही यह सब तय नहीं हो सकता, क्योंकि बुनियादी चीजों की खपत अमीर और गरीब, सभी करीब-करीब बराबर मात्रा में करते हैं।

सवाल है, आगे की हमारी रूपरेखा क्या होनी चाहिए? हमें अब कैसे कदम उठाने चाहिए, ताकि समृद्ध होते भारत की राह और आसान हो सके? इसके लिए सबसे पहले बेरोजगारी दर को कम करने का प्रयास होना चाहिए। किसी एक व्यक्ति को रोजगार न मिल पाने का नुकसान उसके पूरे परिवार को उठाना पड़ता है। अगर हर हाथ को काम मिलने लगेगा, तो परिवार की आमदनी बढ़ेगी, जिससे उपभोग में भी तेजी आएगी। हमें विशेषकर शिक्षित नौजवानों को काम देना चाहिए। इसमें भी महिलाओं को रोजगार देना बहुत जरूरी है, क्योंकि उनके हाथों में पैसे आने से घर तुलनात्मक रूप से अधिक समृद्ध बनता है।

जरूरी यह भी है कि सूक्ष्म व लघु उद्योग क्षेत्र की दिक्कतों को जल्द दूर किया जाए। इन क्षेत्रों में रोजगार-सृजन की संभावना अधिक होने के कारण यहां ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है। इसी तरह, खेती-किसानी से बाहर निकलने वाले खेतिहर मजदूरों का भी हमें ध्यान रखना होगा। इसके लिए ग्रामीण रोजगार गारंटी जैसी योजनाओं का बजट बढ़ाया जाना चाहिए, ताकि उनको अपने घर के आस-पास काम मिल सके।

हमारी नीतियां अधिकाधिक रोजगार पैदा करने के लिए बननी चाहिए। आम बजट में उन मदों पर खर्च अधिक किया जाना चाहिए, जिनसे कामगारों को लाभ मिलता है। पूंजीगत बाजार पर बेशक ध्यान देना चाहिए, लेकिन शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे खर्च भी हमें बढ़ाने चाहिए। इसमें संतुलन इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस-एआई) का इस्तेमाल लगातार बढ़ रहा है और इससे रोजगार प्रभावित होने का अंदेशा जताया जा रहा है। हमें शोध एवं अनुसंधान पर भी अधिक संजीदा होना चाहिए, ताकि हमारा श्रमिक-बल नई प्रौद्योगिकियों के साथ बेहतर कदमताल कर सके। कुल मिलाकर, समग्र प्रयास आवश्यक है, तभी देश से गरीबी उन्मूलन का लक्ष्य भी हम जल्द पा सकेंगे।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

गीत-गजल में खूब प्यार और मिठास भर गए पंकज उधास

यहां स्कैन करें

अजय प्रसन्ना | बांसुरी वादक

गजल गायन को लोकप्रियता के बहुत ऊंचे मुकाम पर पहुंचाने वाले पंकज उधास जब नहीं हैं, तब उनके साथ संगत की अनेक यादें उमड़ रही हैं। वह शिमला की ठंड में खुले आसमान तले दिल को सहलाती गजल याद आ रही है कि *आप जिनके करीब होते हैं, वो बड़े खुशनसीब होते हैं।*

अब वह हम सबसे इतनी दूर चले गए कि फिर न लौटेंगे। कैसे भूल सकता हूं, 1980 के दशक के आखिरी वर्षों की वह बात। तब दिल्ली से शिमला जाना उतना आसान नहीं था। हम लोगों को कार्यक्रम के लिए वहां पहुंचना था। यह पंकज उधास का महत्व ही था कि एक वायुदूत विमान का इंतजाम हुआ और हम आनन-फानन में शिमला पहुंचे। उन्हें सुनने के लिए हर तरह के लोग आए थे। उच्चवर्गीय महफिलों, बंगलों से लेकर किसी रिक्शावाले की झुग्गी तक, पंकज उधास समान चाव से सुने जाते थे। समाज के लगभग हर वर्ग, हर इंसान के लिए वह कुछ न कुछ बहुत उच्च कोटि का गा गए हैं, बेशक, उन्हें सदियों तक सुना जाएगा। वह अपनी कशिश और मिठास भरी आवाज से दिल की गहराइयों का बार-बार स्पर्श करते रहेंगे।

पंकज उधास केवल मंच तक सीमित नहीं थे, वह जब कभी फिल्मों के लिए गाते थे, एक नया प्रतिमान गढ़ देते थे।

साल 1990, दुबई की वह शाम भी याद आ रही है, जब वह गा रहे थे, *बड़े दिनों के बाद हम बे-वतनों को याद, वतन की चिट्ठी आई है,* तब लोगों की आंखें भर आई थीं। एक-एक अंतरे पर लोग सिसकते थे और जब गीत *देश पराया छोड़ के आजा, पंजी पिंजरा तोड़ के आजा* तक पहुंचा, तब श्रोताओं के बीच कोई ऐसा नहीं था, जो रो नहीं रहा था। पंकज उधास को *नाम* फिल्म (1986) के गीत *चिट्ठी आई है* से जो ख्याति मिली, उसकी कोई तुलना नहीं है। गीतकार आनंद बक्षी का लिखा और लक्ष्मीकांत-प्यारेलाल के संगीत से सजा यह गीत कालजयी श्रेणी का भारतीय सुगम संगीत है। सबसे बड़ी बात, फिल्म में यह गीत पंकज उधास पर ही फिल्माया गया है। शॉल ओढ़ने का उनका वह अंदाज भी समाज में चल पड़ा था।

उनके जाने के बाद हम अनेक कलाकारों के बीच चर्चा हो रही थी और सभी याद कर रहे थे कि पंकज उधास अपने साथ संगत करने वालों को परिवार के सदस्य जैसा स्नेह देते थे। जब उनकी ख्याति एकदम चरम पर पहुंच गई थी, तब मैं नया था, पर मुझे भी उन्होंने बहुत सम्मान-स्नेह दिया। उनकी एक बड़ी खूबी यह भी थी कि वह बहुत प्रोत्साहित करते थे। कहते थे, केवल मेरे साथ साज बजाने तक सीमित न रहो, स्वतंत्र रूप से भी प्रदर्शन के लिए स्वयं को तैयार करो। फोन पर भी वह पूछते रहते थे कि तुम अलग क्या कर रहे हो?

उनकी हर प्रस्तुति सफल होती थी। कभी ऐसा नहीं हुआ कि हॉल में सीटें खाली रह गई हों। जब हॉल में सीटें भर जाती थीं, तो लोग खड़े होकर सुनते थे। उनके एक से बढ़कर एक गीत बस सुनते चले जाइए, *चांदी जैसा रंग है तेरा सोने जैसे बाल..., इक तरफ उसका घर, एक तरफ मयकदा, या घुंघरू टूट गए...।*

वह अक्सर बताते थे कि उन्होंने अनूप जलोटा, हरिहरन के साथ संगीत की दुनिया में संघर्ष शुरू किया था और उनके दो अन्य भाई भी बहुत सुंदर गाते थे। उनके भाई मनहर उधास की भी अपनी शैली थी। उस दौर में ज्यादातर संगीतकारों, गायकों ने अपनी शैली विकसित कर रखी थी। पंकज उधास की शैली का अनुसरण न जाने कितने गायक-कलाकार आज करते हैं।

वह आज के समय में भी व्यस्त कलाकार थे और करीब दो साल तक के उनके कार्यक्रम तय होते थे। हम गौर करें कि गजल की भाषा पर भी उनका असर है, वह मुश्किल लफ्जों के बजाय आसान लफ्जों को तरजीह देते थे, ताकि आम आदमी भी गजल से जुड़ सके, जैसे *निकलो ना बेनकाब जमाना खराब है...।* यह बात भी रेखांकित करने लायक है कि पंकज उधास केवल मंच तक सीमित नहीं थे, वह जब कभी फिल्मों के लिए गाते थे, एक नया प्रतिमान गढ़ देते थे। वह मुख्यधारा के गायकों को भी एहसास कराते थे कि गीतों में कैसे प्यार भरा जाता है। वह ऐसा गा देते थे कि लगता, ऐसे कोई और नहीं गा सकता, जैसे मुझे याद आ रहा है, *ना कजरे की धार, न मोतियों के हार* या फिर *जिएं तो जिएं कैसे बिन आपके...।*

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

मानवता न बंटने पाए

एक बार किसी शिष्य ने प्रश्न किया, जब समूची मानव जाति एक समूह है। मानवता एक ही है, तो फिर अलग-अलग पंथ क्यों? प्रश्न उसका तार्किक था। दरअसल, हमें सबसे पहले यह समझना है कि किसी भी पंथ का उद्देश्य क्या है? उसका उद्देश्य सर्वोच्च सत्ता की ओर, आनंद के शाश्वत स्रोत की ओर चलना है। ज्ञात या अज्ञात, हम किसकी खोज में हैं? हम चाहते क्या हैं? इन सभी सवालों का एक ही जवाब है कि मनुष्य आनंद चाहता है, शांति चाहता है।

हम सभी उसी परमात्मा की ओर ज्ञात या अज्ञात रूप में बढ़ रहे हैं। लोग कह सकते हैं कि अनेकानेक धर्म हैं, इसलिए पंथ अनेक हो सकते हैं। लेकिन नहीं। धर्म एक ही है। वह है सनातन धर्म, मानव धर्म। प्रश्न उठता है कि धर्म है क्या? धर्म एक मार्ग है ईश्वर प्राप्ति-परमपिता से मिलकर एकाकार हो जाने का। यही लक्ष्य है। इसलिए जो एक से अधिक धर्म की बात करते हैं, उन्हें इसकी गहराइयों में उतरने की जरूरत है। मनुष्य मात्र का एक ही धर्म है, जो बताता है कि हमें परमपिता की ओर चलना है। अब देखो, क्या परमपुरुष ने बनाया है? उसने मनुष्य बनाया। फिर वर्गों के विभाजन का आधार क्या होता है- आर्थिक, यानी धनी-गरीब आदि। अब बताओ, इन वर्गों को ईश्वर ने बनाया या मनुष्य ने? निश्चित तौर पर मनुष्य ने बनाया है। ये सब हमारी त्रुटिपूर्ण सामाजिक व्यवस्था के कारण हैं, और इस त्रुटिपूर्ण व्यवस्था का निर्माण करता कौन है? मनुष्य।

जब सभी मानव परमपुरुष की संतान हैं, तो क्या वे एक से अधिक जातियों में विभक्त किए जा सकते हैं? जब उनके पिता एक ही हैं, जब एक से सब उत्पन्न हैं, तो निश्चय ही वे सब एक ही जाति के हैं। इस प्रकार यह निष्कर्ष अंतिम है और इसे स्वीकार किया जाना चाहिए। मानव समाज एकल तत्व है- एक और अविभाज्य।

इसलिए प्रत्येक मनुष्य को हमेशा याद रखना चाहिए कि उससे न कोई श्रेष्ठ है, न हीन। आपके मन में कई विचार उत्पन्न हो सकते हैं। मन का एक भाग कहता है, 'मैं पूर्णकालिक समाज-सेवक बनूंगा। अपना घर-बार छोड़ दूंगा।' फिर एक अन्य भाग कहेगा, 'लेकिन मेरी माता रोएंगी।' कोई और भाग कहेगा, 'नहीं-नहीं, मुझे वृहत्तर संसार के लिए कुछ करना है।' इस तरह, मन में अनेकानेक विचार आते हैं। फिर कभी मत भूलो कि मनुष्य तर्क से अधिक भावना से प्रेरणा प्राप्त करता है।

जब सभी मानव परमपुरुष की संतान हैं, तो क्या वे एक से अधिक जातियों में विभक्त किए जा सकते हैं? इसलिए प्रत्येक मनुष्य को याद रखना चाहिए कि उससे न कोई श्रेष्ठ है, न हीन।

इसलिए इस प्रक्रिया में आपकी भावनाएं जुड़ी होनी चाहिए। पूर्ण एकाग्रता के साथ अपने हृदय के अंतरतम से, संपूर्ण मधुरता के साथ आप परमपुरुष का अभिवादन कर रहे हैं, जो प्रत्येक मनुष्य के हृदय में स्थित हैं। मानव समाज एक और अविभाज्य बने, यही आपका उद्यम होना चाहिए। यही परमपुरुष की मधुर अभिव्यक्ति है।

श्री श्री आनंदमूर्ति

जो बाइडन | अमेरिकी राष्ट्रपति

जब पुतिन ने अपने टैंकों को यूक्रेन में घुसने का आदेश दिया, तब उन्होंने सोचा था कि दुनिया झुक जाएगी। मगर यूक्रेन के लोग बहुत मजबूत हैं। हमारा गठबंधन एकजुट है और लोकतंत्र टिकाऊ भी। आइए, पुतिन को गलत साबित करते रहें!

अनुलोम-विलोम

राष्ट्रीय विज्ञान दिवस

वंचित तबकों तक पहुंचती नई प्रौद्योगिकी

आज (28 फरवरी) को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस मनाया जाता है। इसका मकसद लोगों में विज्ञान के प्रति जागरूकता बढ़ाना और नई-नई प्रौद्योगिकियों की तरफ उनको प्रोत्साहित करना है। इस दिशा में भारत ने काफी तरक्की की है। यह तो अब आम बात है कि हमारी पूरी गतिविधि वैज्ञानिक उपकरणों पर निर्भर है, फिर चाहे सुबह उठने के बाद घड़ी देखना हो या कपड़ा धोने के लिए वाशिंग मशीन का इस्तेमाल करना। मोबाइल, गाड़ी आदि सभी वैज्ञानिक उपकरण ही हैं और ये सभी हमें सुगम जीवन जीने में मदद कर रहे हैं। अच्छी बात यह है कि नई प्रौद्योगिकियां भी हमें खूब भा रही हैं। अब तो सुदूर गांव में भी स्मार्ट वाच या ब्लूटुथ से चलने वाले वैज्ञानिक उपकरण देखे जा सकते हैं। कंप्यूटर और लैपटॉप तो मानो बीते दिनों की बात हो गए। खासतौर से नई पीढ़ी की रुचि इनमें ज्यादा है, और नए उम्र के लोग मोबाइल से काफी काम करते देखे जा सकते हैं।

इस काम में सरकार और कई संस्थान भी उनकी मदद करते हैं। बुनियादी तौर पर तो स्कूलों में ही यह प्रयास किया जा रहा है, ताकि बच्चों में वैज्ञानिक सोच पैदा हो। उनमें जागरूकता पैदा करने के लिए केंद्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग तमाम तरह के कार्यक्रम चलाता है। कई तरह के अवॉर्ड बांटे जाते हैं। निजी स्कूलों में तो बच्चों को किसी खास दिन वैज्ञानिक मॉडल बनाने को कहा जाता है। उन्हें बताया जाता है कि वे दैनिक जीवन से जुड़ी समस्याओं के निराकरण का उपाय अपने वैज्ञानिक मॉडल में खोजें। चयनित मॉडल को पुरस्कृत किया जाता है अथवा बच्चों को आर्थिक सहायता दी जाती है, ताकि वे अपनी कल्पना को साकार कर सकें। चुनिंदा बच्चों को विदेश में नई-नई वैज्ञानिक जानकारी हासिल करने के लिए भी भेजा जाता है, जो फायदेमंद होता है।

आज जब एआई, यानी कृत्रिम बुद्धिमत्ता की ओर हम तेजी से बढ़ रहे हैं, तब विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के उपयोग से ग्रामीण क्षेत्रों में जल, बिजली, स्वच्छता, कृषि, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि क्षेत्रों में अनवरत सुधार किया जा रहा है। इससे ग्रामीण समाज के बीच औद्योगिकीकरण, रोजगार के अवसर, आय, जीवन की गुणवत्ता आदि में सुधार हो रहा है और उनका जीवन-स्तर पहले की तुलना में सुधर रहा है। ऐसा नहीं है कि देश में सब कुछ सुनहरा है, कई जगहों पर कमियां भी दिखती हैं, पर जिस तरह से गांव-गांव में विज्ञान एवं नई प्रौद्योगिकी को लेकर ललक बढ़ रही है, उससे सुखद संकेत मिलते हैं। जनसांख्यिकीय लाभांश और वैज्ञानिक प्रगति नए भारत का निर्माण कर सकते हैं।

कल्पना कुमारी, टिप्पणीकार

वैज्ञानिक सोच का अब भी व्यापक अभाव

यह सच है कि हमारा देश विज्ञान के क्षेत्र में लगातार आगे बढ़ रहा है। हाल ही में चंद्रयान-3 की सफलता ने दुनिया को बता दिया कि विज्ञान को लेकर हमारा नजरिया क्या है? हमारे वैज्ञानिक भी अमेरिका, रूस, चीन जैसे देशों के वैज्ञानिकों से कतई कम नहीं हैं। इसके अलावा, गांव-देहात में भी वैज्ञानिक सोच बढ़ी है। लोग विज्ञान की तरफ रुचि दिखाने लगे हैं। फिर भी, कुछ ऐसे छिद्र हैं, जिन पर हमको काम करना चाहिए।

सबसे पहले, सरकारों को विज्ञान की पढ़ाई और शोध-अनुसंधान को लेकर विशेष गंभीरता दिखानी होगी। भारत में विज्ञान के क्षेत्र में अनमोल हीरे हैं, लेकिन उनको तराशने का काम ढुलमुल है। यही कारण है कि भारतीय मूल के बहुत से वैज्ञानिक दूसरे देशों में जाकर अपना शोध-कार्य पूरा करते हैं, जिससे उस देश की वाहवाही होती है। अगर अपने देश में विज्ञान से जुड़े शोध व अनुसंधान को लेकर संजीदगी दिखाई जाए, तो भारत हर तकनीक के विकास में नेतृत्व की भूमिका निभा सकता है। इसी तरह, आर्थिक तंगी के कारण कई प्रतिभाशाली छात्र अपनी वैज्ञानिक खोज में आगे नहीं बढ़ पाते। वे उन्नत प्रयोगशालाओं और अन्य सुविधाओं के लिए तरसते रहते हैं। कई तो इसलिए भी विज्ञान विषयों से किनारा कर लेते हैं, क्योंकि उनको लगता है कि इसमें उनका भविष्य नहीं है। इसके बजाय, वे उन प्रोफेशनल विषयों का चयन करते हैं, जिनसे तत्काल कमाने की सुविधा उनको मिल सके। संभवतः यह भी कारण है कि वैज्ञानिक शोध एवं अनुसंधान में हम अन्य देशों से पीछे हैं, जबकि हमारे नौजवानों ने ही अमेरिका में सिलिकॉन वैली की नींव रखी है।

जाहिर है, हमारी सरकारों को तत्परता दिखानी होगी। उनको कई मोर्चों पर काम करना होगा। बुनियादी स्तर पर स्कूल-कॉलेजों में यह काम जल्द हो कि अधिक से अधिक बच्चे विज्ञान से जुड़े विषयों को पढ़ सकें। फिर, उनको उन्नत प्रयोगशालाओं की सुविधा उपलब्ध करानी होगी, ताकि वे मन-मुताबिक शोध एवं अनुसंधान कर सकें। इसके लिए उनको जरूरी आर्थिक मदद भी देनी होगी। यह सही है कि भारत सरकार इस मामले में काम कर रही है, लेकिन जमीनी जरूरत के हिसाब से वे कम जान पड़ रहे हैं। हमें ऐसा माहौल बनाना ही होगा कि हमारे प्रतिभावान छात्र देश छोड़कर विदेश न जाएं। इससे न सिर्फ प्रतिभा का पलायन होता है, बल्कि देश को आर्थिक नुकसान भी होता है। राष्ट्रीय विज्ञान दिवस के मौके पर हमें देश में बेहतर वैज्ञानिक माहौल बनाने का ही संकल्प लेना चाहिए।

राजेश कुमार चौहान, टिप्पणीकार

प्रवाह

महोत्सव विश्वास का 75 — निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक — स्थापना वर्ष : 1948

किताबें पढ़ने से हमें एकांत में विचार करने की आदत और सच्ची खुशी मिलती है। - सर्वपल्ली राधाकृष्णन

संदेशखाली में महिलाओं के यौन उत्पीड़न एवं आदिवासियों की जमीन पर कब्जा करने के कथित आरोपी शाहजहां शेख की अब तक गिरफ्तारी न होने को लेकर अदालत द्वारा राज्य सरकार को पुनः फटकार लगाए जाने के बाद राज्य सरकार बेशक हरकत में आई है, पर इस पूरे प्रकरण में उसका रवैया ठीक नहीं रहा है।

संदेशखाली का संदेश

पश्चिम बंगाल में उत्तर 24 परगना जिले के संदेशखाली में महिलाओं के यौन उत्पीड़न एवं आदिवासियों की जमीन पर कब्जा करने के कथित आरोपी तृणमूल कांग्रेस नेता शाहजहां शेख की अब तक गिरफ्तारी न होने को लेकर कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा राज्य सरकार को पुनः फटकार लगाए जाने के बाद बेशक तृणमूल सरकार हरकत में आई है, पर इस पूरे प्रकरण में उसने जैसी असंवेदनशीलता दिखाई है, वह वाकई क्षोभ का विषय है। राज्य सरकार के रवैये और पुलिस की सुस्त कार्रवाई को आड़े हाथों लेते हुए अदालत का यह कहना वाकई गंभीर है कि संदेशखाली की घटनाओं की सूचना चार साल पहले मिलने के बावजूद आरोप पत्र तैयार होने में हुआ विलंब हैरत में डालने वाला है। एक महिला मुख्यमंत्री होने के बाद भी महिलाओं से जुड़े मुद्दे पर राज्य सरकार की ऐसी उदासीनता अखरने वाली भी है। उल्लेखनीय है कि संदेशखाली की महिलाओं ने राज्य में सत्ताधारी पार्टी के तीन नेताओं-शाहजहां शेख, शिबू हजारा और उत्तम सरदार के खिलाफ शिकायतें दर्ज कराई थीं, जिनमें से शिबू हजारा और उत्तम सरदार तो गिरफ्तार किए जा चुके हैं, लेकिन शाहजहां शेख तब से फरार है, जब बीती जनवरी में कथित राशन घोटाले में ईडी की टीम ने उसके ठिकानों पर छापेमारी की थी, और उसके समर्थकों ने ईडी की टीम पर हमला किया था। नहीं भूलना चाहिए कि पश्चिम बंगाल में ममता बनर्जी ने 2011 में वाम मोर्चा सरकार के 34 साल के कार्यकाल का अंत करते हुए 'परिवर्तन' के जिस नारे के साथ राज्य की सत्ता संभाली, वह केवल सरकार में नहीं, बल्कि राज्य की राजनीतिक संस्कृति में परिवर्तन का आह्वान करता था। लेकिन आज संदेशखाली में जो हो रहा है, वह तो यही बताता है कि पश्चिम बंगाल की राजनीति के तौर-तरीके आज भी नहीं बदले हैं। तब सिंगूर व नंदीग्राम में जमीन अधिग्रहण मुद्दा बना था, आज संदेशखाली में जनता की नाराजगी मुद्दा बनी है। अब ममता बनर्जी बेशक

संदेशखाली की घटनाओं को विपक्षियों की साजिश कहें, लेकिन इस वक्त न तो विपक्षी दल और न ही प्रधानमंत्री मोदी का मार्च में संभावित पश्चिम बंगाल का दौरा उनके लिए चिंता का विषय होना चाहिए, बल्कि जरूरी यह है कि वह ऐसे कदम उठाएं, जो नैतिक और राजनीतिक दृष्टि से सही हों, ताकि संदेशखाली की महिलाओं में अपनी सुरक्षा को लेकर भरोसा जगे।

युद्ध बन गए हैं मुनाफे का कारोबार

पूरी दुनिया में युद्ध चलते रहें, अमेरिका व पश्चिमी देशों के लिए इससे बेहतर कुछ नहीं हो सकता। तीन वर्ष बीत जाने के बावजूद रूस-यूक्रेन युद्ध का ठंडा न हो पाना बताता है कि कैसे इन देशों ने वैश्विक युद्धों को रोजगार सृजन व अपनी अर्थव्यवस्था के विकास का साधन बनाया हुआ है।

मारूफ रजा

रणनीतिक विश्लेषक

यूक्रेन-रूस युद्ध के तीन वर्ष पूरे हो चुके हैं और यह साफ जाहिर होता है कि इस अविवेकपूर्ण युद्ध को रोकने के प्रति न तो अमेरिका और न ही रूस इच्छुक है। आखिर कौन-सी वजह है, जिसके चलते यह युद्ध खत्म नहीं हो रहा? हजारों लोगों की जानें चली गईं और यूक्रेन में बड़े पैमाने पर विनाश हुआ, लेकिन फिलहाल युद्ध का कोई अंत नहीं दिख रहा है। यही नहीं, इस युद्ध में रूस की सैन्य प्रतिष्ठा पर भी आंच आती दिखी, क्योंकि वह अब तक यूक्रेन के केवल 17 फीसदी हिस्से पर ही कब्जा कर सका है।

वास्तव में हमले के पहले वर्ष के बाद अमेरिका और रूस ने अपने सैन्य हथियारों का परीक्षण एवं प्रदर्शन करने के लिए युद्ध क्षेत्रों का उपयोग किया। ऐसा लगता है, मानो दोनों पक्ष अपने हथियारों की बिक्री और प्रदर्शन करना चाहते हैं, ताकि यह याद दिलाया जा सके कि जान-माल के नुकसान की परवाह किए बिना युद्ध हथियार बेचने के लाभदायक व्यवसाय को आधार प्रदान करता है। उल्लेखनीय है कि अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जनरल आइजनहावर ने स्वीकार किया था कि अमेरिका एक 'सैन्य औद्योगिक प्रतिष्ठान' है। यूक्रेन युद्ध और गाजा पट्टी पर इस्राइल का हमला इस बात के ताजा उदाहरण हैं कि कैसे कम से कम युद्धविराम के जरिये समझौता किया जा सकता था, लेकिन अमेरिका और यूरोपीय संघ के सैन्य औद्योगिक प्रतिष्ठान के निहित स्वार्थों ने इसे रोक दिया। युद्धों से हथियारों की बिक्री होती है और यह अमेरिका एवं पश्चिमी देशों के लिए लाभप्रद उद्यम है। इससे रोजगार सृजित होता है और चुनाव प्रचार एवं उम्मीदवारों को धन मिलता है। पश्चिमी देशों में रोजगार के अवसरों के विस्तार का लालच, दुनिया के अन्य हिस्सों में निर्दोष लोगों की जान पर भारी पड़ता है, चाहे सरकारों के नैतिक दावे कुछ भी हों।

अमेरिकी विदेश मंत्री एंटनी ब्लिंकन ने हाल ही में कहा, 'यदि आप रूसी आक्रामकता से निपटने के लिए यूक्रेन की रक्षा में हमारे द्वारा किए

गए निवेश को देखें, तो हमने जो सुरक्षा सहायता प्रदान की है, उसका 90 फीसदी वास्तव में अमेरिका में निर्माताओं एवं उत्पादन पर खर्च किया गया है, जिससे अमेरिका में नौकरियां पैदा हुईं और हमारी अपनी अर्थव्यवस्था का ज्यादा विकास हुआ। इसलिए यह हमारे लिए फायदे का सौदा है, जिसे हमें जारी रखने की जरूरत है।' अमेरिकी विदेश मंत्री 2023 में ब्रिटिश विदेश मंत्री डेविड कैमरन के साथ एक संयुक्त प्रेस वार्ता में बोल रहे थे।

बीबीसी के विश्लेषक मैक्स मात्जा कहते हैं, 'हथियार हस्तांतरण और रक्षा व्यापार अमेरिकी विदेश नीति के महत्वपूर्ण उपकरण हैं, जिनका क्षेत्रीय और वैश्विक सुरक्षा पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ सकता है।' अमेरिकी विदेश विभाग ने बताया कि अमेरिकी सरकार ने 80 अरब डॉलर से अधिक की बिक्री के लिए सीधे सौदा किया है, जो 2022 से 56 फीसदी ज्यादा है। बाकी अमेरिकी रक्षा कंपनियों द्वारा विदेशी देशों को सीधे हथियार बेचा गया था।

यूक्रेन के विदेश मंत्री ने हाल ही में कहा कि प्रतिदिन युद्ध की लागत 13.6 करोड़ डॉलर है और अमेरिकी संसद एवं यूरोपीय संघ में यूक्रेन को सैन्य सहायता एवं आवंटन को लेकर हुए हंगामे के कारण पुतिन का मनोबल बढ़ा और उसने यूक्रेन पर बड़े और आक्रामक हमले का आदेश दिया। इसने यूक्रेन के करीबी अन्य यूरोपीय देशों को परेशान कर दिया है। और बदले में अमेरिकी हथियारों की विदेशों में बिक्री पिछले साल तेजी से बढ़ी, जो रिकॉर्ड कुल 238 अरब डॉलर तक पहुंच गई, क्योंकि यूक्रेन पर रूस के आक्रमण ने हथियारों की मांग बढ़ा दी। यूक्रेन पर रूसी हमला शुरू होने के बाद से अमेरिका और यूरोपीय संघ ने यूक्रेन को सैन्य सहायता और वित्तीय सहायता के रूप में क्रमशः 113 अरब डॉलर और 91 अरब डॉलर दिए हैं।

प्रमुख अमेरिकी समाचार एजेंसी *पोलिटिको* ने वाशिंगटन और उसके आसपास क्या कुछ चल रहा है, उस पर प्रकाश डाला है। जब ज्यादा से ज्यादा हथियारों के उत्पादन और बिक्री के लिए तीव्र पैरवी के प्रयासों की बात आती है, तो *पोलिटिको* ने दावा किया कि 'व्हाइट हाउस चुपचाप दोनों दलों के सांसदों से आग्रह करता है कि वे घरेलू आर्थिक उछाल के लिए दूसरे देशों में युद्धों को बढ़ावा दें। डेमोक्रेट्स एवं रिपब्लिकन, दोनों दलों के राजनेता रूस का प्रतिरोध करने के लिए यूक्रेन को सहायता देने का समर्थन करते रहे हैं, ताकि यह साबित किया जा सके कि ऐसा करना अमेरिका में रोजगार सृजन के लिए अच्छा है।'

सेवानिवृत्त सैन्य अधिकारी और रणनीतिकार, जो हथियार उद्योग में आकर्षक भूमिका निभाते हैं, यह सुनिश्चित करते हैं कि रक्षा क्षेत्र के दिग्गजों की बोली यथासंभव प्रभावी तरीके लगाई जाए। यहां तक कि कुछ मीडिया घराने भी इन कंपनियों का समर्थन करने वाले समूह में शामिल हैं। बड़े रक्षा निगमों के शीर्ष अधिकारियों की शक्तिशाली पदों पर बैठे अमेरिकी राजनेताओं के साथ गहरी मिलीभगत है।

प्रसिद्ध राष्ट्रीय सुरक्षा विश्लेषक मेल्विन गुडमैन संक्षेप में कहते हैं : 'अमेरिकी संसद विशेष रूप से हथियार लॉबी के प्रति उत्तरदायी है, जो किसी भी कानून, जिसमें सैन्य खर्च, सैन्य तैनाती और सैन्य हथियार शामिल हैं, के लिए भारी द्विदलीय बहुमत जुटाती है। सीनेटर और प्रतिनिधि सैन्य खर्च बिल को 'नौकरी' बिल मानते हैं।' अमेरिकी सैन्य औद्योगिक प्रतिष्ठान के समर्थक पूरे सरकारी और अर्ध-सरकारी तंत्र में पैठ बनाए हुए हैं। लॉबिस्ट राजनेताओं के साथ सावधानीपूर्वक मिलीभगत करते हैं। रक्षा ठेकेदारों के राजनीतिक अभिजात वर्ग से गहरे संपर्क होते हैं और वे बड़ी रक्षा कंपनियों की तरह उन्हें उदारतापूर्वक चुनाव लड़ने के लिए धन देते हैं। बड़ी रक्षा कंपनियां थिंक टैंक और अन्य संबद्ध संस्थानों के संरक्षक होते हैं, जो हथियार विक्रेताओं के एजेंडे को आगे बढ़ा सकते हैं।

दरअसल, यूक्रेन युद्ध में अमेरिका की प्रत्यक्ष या परोक्ष संलग्नता का एक उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि रूसी रक्षा उद्योग लगातार विफल होता रहे और रूसी हथियार निर्माताओं को निर्यात से मिलने वाले धन से वंचित किया जा सके। अमेरिकी हथियार हस्तांतरण कार्यालय के प्रमुख के अनुसार, रूस से दूर होने वाले देशों से भी अमेरिकी हथियार बिक्री को भी बढ़ावा मिला।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

स्वामी मुकुंदानंद

अनुचित स्रोतों पर विश्वास हमें गलत दिशा में ले जाता है। आध्यात्मिक पथ पर हमारा लक्ष्य ऐसे विश्वासों का निर्माण करना होना चाहिए, जो हमारी आध्यात्मिक प्रगति में सहायक हों।

जीवन के हर कदम पर विश्वास जरूरी है

विश्वास के बिना कोई नहीं रह सकता। यह मानव व्यक्तित्व का अविभाज्य पहलू है। यहां तक कि सांसारिक गतिविधियों में भी विश्वास की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, किसी होटल में भोजन करने के लिए यह विश्वास जरूरी है कि भोजन जहरीला नहीं है। इसी तरह, बैंक में पैसा जमा करते समय हमें भरोसा होता है कि हमारा धन सुरक्षित रहेगा और बैंक उसे हड़पेगा नहीं। अतः जीवन के हर कदम पर विश्वास की आवश्यकता होती है।

हमारे जीवन की दिशा इस बात से निर्धारित होती है कि हम अपनी आस्था कहां रखते हैं। उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति यह मानता है कि धन महत्वपूर्ण है, वह धन संचय करने में अपना पूरा जीवन व्यतीत कर देता है। महात्मा गांधी का सत्य और अहिंसा में दृढ़ विश्वास था। उनका यह विश्वास इतना मजबूत था कि उन्होंने अपनी मान्यताओं के आधार पर भारत के स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व किया। इसी प्रकार जो लोग भगवद्-प्राप्ति के सर्वोपरि लक्ष्य में गहरी आस्था रखते हैं, वे ईश्वर की खोज में अपने भौतिक जीवन का त्याग कर देते हैं। इस प्रकार, हमारा विश्वास हमारे जीवन की दिशा को परिभाषित करता है।

आस्था विभिन्न माध्यमों से उत्पन्न होती है। कुछ लोग उस पर विश्वास करते हैं, जो प्रत्यक्ष है। उदाहरण के लिए, लोग कहते हैं, 'मैं ईश्वर में विश्वास नहीं करता, क्योंकि मैं उसे देख नहीं सकता।' ऐसे लोगों को ईश्वर पर भरोसा नहीं होता, पर अपनी आंखों पर भरोसा होता है। कुछ लोग परिवार और दोस्तों से राय लेते हैं। कुछ लोग अनुभव के आधार पर विश्वास बनाते हैं। एक छात्र टेनिस खेल में हाथ आजमाता है और विफल होने पर स्वतः मान लेता है कि वह खेल में निपुण नहीं हो सकता और अपनी क्षमताओं पर विश्वास खो देता है। कुछ लोग सुनी-सुनाई बातों पर भी विश्वास कर लेते हैं। ऐसा जर्मनी में नाजी शासन के दौरान देखा गया था। उन्होंने राष्ट्र को घोर असत्य पर विश्वास करने के लिए षड्यंत्र रचा, परिणामस्वरूप उन्हें द्वितीय विश्व युद्ध का सामना करना पड़ा। उपर्युक्त सभी स्रोतों में अपनी-अपनी कमियां हैं, क्योंकि उनमें त्रुटियां होने की संभावना है। अनुचित स्रोतों पर किया गया विश्वास हमें गलत दिशा में ले जाता है, अंततः हमारा जीवन भी विपरीत दिशा में बढ़ता है।

आध्यात्मिक पथ पर हमारा लक्ष्य ऐसे विश्वासों का निर्माण करना होना चाहिए, जो आध्यात्मिक प्रगति में सहायक हों। तो, हम ऐसे उचित विश्वासों का कैसे पोषण करें, जो हमारे लिए कल्याणकारी हों एवं हमें ईश्वर की ओर ले जाएं? हालांकि गुरु में आस्था रखने के संबंध में सावधानी बरतने की सलाह दी जाती है। हमें अंधविश्वास नहीं करना चाहिए। इससे पहले कि हम किसी गुरु पर भरोसा करें, हमें यह पुष्टि करनी चाहिए कि उन्हें परम सत्य का ज्ञान हो गया है। एक बार पुष्टि हो जाने पर हम उनकी बातों पर निर्विवाद विश्वास रख सकते हैं, क्योंकि वे त्रुटि रहित हैं।

आत्मोन्नति का साधन...

सूत्र

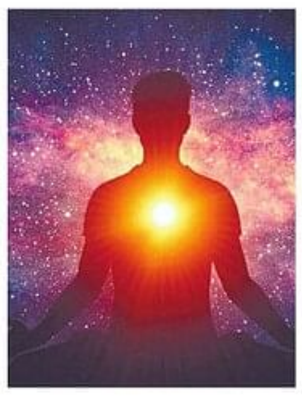

सच्चा जीवन और ऊंचा लक्ष्य ही आत्मोन्नति का एकमात्र साधन है। यदि मनुष्य का लक्ष्य ऊंचा है, किंतु नीयत साफ नहीं, न साधन ही ठीक है, तो लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होगी। उदाहरण के लिए, मनुष्य करोड़पति बनना चाहे, किंतु वह बेच रहा है बाजार में भुने हुए चने, तो वह करोड़पति का लक्ष्य रखते हुए भी साधनहीन होने के कारण करोड़पति नहीं बन सकता।

दूसरा पहलू

चीन ने जबसे महामारी के प्रतिबंधों को खत्म कर सीमा खोल दी है, शेंजेन हांगकांग के लोगों का गंतव्य बन गया है।

चीन क्यों जा रहे हैं हांगकांग के लोग

अस्सी साल की श्वेन-चुन वा पति के साथ तेजी से एक हरी बस में सवार होती हैं। उनके साथ बीस से ज्यादा लोग और हैं। इन सबके पास खाली सूटकेस हैं। इन तमाम हांगकांगवासियों का गंतव्य चीनी शहर शेंजेन है, जो हांगकांग की उत्तरी सीमा से सटा हुआ है। श्वेन-चुन वा एक साल में दूसरी बार शेंजेन जा रही हैं। पिछली बार नया दांत लगवाने के लिए वह शेंजेन गई थीं। वहां 9,000 डॉलर में उनका काम हो गया था, जबकि हांगकांग में इसके लिए उन्हें कम से कम 25,000 डॉलर खर्च करने पड़ते। 'मेरे पास उतने पैसे नहीं थे, इसलिए मैंने शेंजेन जाने का फैसला किया था', हंसते हुए वह कहती हैं।

ओलिविया वैंग

हांगकांग में महंगाई तो ज्यादा है ही, वहां वस्तुओं के विकल्प कम हैं और खरीदारी का वैसा आनंद भी नहीं है, जैसा शेंजेन में है। शेयर बाजार की बुरी स्थिति के कारण हांगकांग की अर्थव्यवस्था तबाह है।

महामारी के दौर के प्रतिबंधों को खत्म करते हुए चीन ने जनवरी, 2023 में हांगकांग से लगी अपनी सरहद खोल दी। उसके बाद से शेंजेन शहर हांगकांगवासियों का साप्ताहिक गंतव्य ही हो गया है, जहां वे सस्ते में खरीदारी करने, मसालेदार लजीज खाना खाने और दांत के डॉक्टरों को दिखाने जाते हैं। हांगकांग में महंगाई तो ज्यादा है ही, वहां वस्तुओं के विकल्प कम हैं, और खरीदारी का वैसा आनंद भी नहीं है, जैसा शेंजेन में है। शेयर बाजार की बुरी स्थिति के कारण हांगकांग की अर्थव्यवस्था तबाह है, ऐसे में, वहां के लोगों के लिए पैसे का महत्व बढ़ गया है। पैसे बचाने के लिए ही वे आए दिन शेंजेन का रुख करते हैं। चीन की अर्थव्यवस्था का हाल भी अच्छा नहीं है, लेकिन वहां सामान सस्ते हैं।

सप्ताहांत में कभी-कभी शेंजेन में इतनी भीड़ हो जाती है कि स्थानीय चीनी मजाक करते हैं कि हांगकांगवासियों ने शहर पर कब्जा कर लिया है।

खरीदारी के लिए हांगकांगवासियों के चीन जाने का यह चलन नया है। एक समय था, जब सस्ते का आकर्षण चीनियों को हांगकांग के बाजारों तक ले जाता था। लेकिन अब तस्वीर बदल गई है। आलम यह है कि हांगकांग के लोग सोशल मीडिया पर एक-दूसरे को बताते रहते हैं कि शेंजेन में कहां बेहतरीन पेस्ट्री मिलती है और किस दुकान पर रोबोट चाय पेश करता है। जो टूर ऑपरेटर पहले जापान और थाईलैंड के पैकेज बेचते थे, वे अब शेंजेन का टूर आयोजित करने लगे हैं और यह भी बताते हैं कि कहां चीजें सबसे सस्ते में मिल सकती हैं। सप्ताहांत में कभी-कभी शेंजेन में इतनी भीड़ हो जाती है कि स्थानीय चीनी मजाक करते हैं कि हांगकांगवासियों ने शहर पर कब्जा कर लिया है। शेंजेन के व्यापारी, होटल मालिक और दांतों के डॉक्टर भी हांगकांग से आने वाले ग्राहकों को छूट देते हैं और उन्हें अपने यहां आकर्षित करने के लिए तमाम कदम उठाते हैं।

©The New York Times 2024

आंकड़े

सौ के नोटों में कमी

पिछले सात वित्त वर्षों में सौ रुपये के नोटों के प्रचलन में 28 फीसदी की गिरावट देखने को मिली है।

2023	1,80,584
2022	1,81,421
2021	1,90,555
2020	1,99,021
2019	2,00,738
2018	2,22,149
2017	2,52,801

स्रोत: भारतीय रिजर्व बैंक

कठोर परिश्रम के कारण ही मैं आज कारखानों का मालिक बन पाया हूं। मैं अपने पुराने दिनों को भूल न जाऊं, इसीलिए अपने काम स्वयं करता हूं।

सादगी की मूर्ति

अंतर्यात्रा

शिवकुमार गोयल

हेनरी फोर्ड विश्व के अग्रणी उद्योगपति थे। उन्होंने अमेरिका में फोर्ड मोटर कंपनी की स्थापना की। उनके नाम पर बनाई गई फोर्ड मोटर ने पूरे संसार में ख्याति प्राप्त की।

एक भारतीय उद्योगपति ने मोटरकार का कारखाना लगाने से पूर्व अमेरिका जाकर हेनरी फोर्ड से भेंट करने का निश्चय किया। अमेरिका पहुंचकर उसने हेनरी फोर्ड को फोन करके मिलने की इच्छा व्यक्त की। फोर्ड ने कहा, 'शाम छह बजे निवास स्थान पर आ जाइएगा।'

भारतीय उद्योगपति उनके घर पहुंचे, तो देखा कि एक व्यक्ति अपने खाने के बर्तन स्वयं साफ कर रहा है। बर्तन साफ कर एक ओर रख देने के बाद उसने कहा, 'बैठिए, मुझे हेनरी फोर्ड कहते हैं।'

भारतीय उद्योगपति ने कहा, 'आप इतने बड़े व्यक्ति होकर भी अपने बर्तन स्वयं क्यों साफ कर रहे थे? यह काम तो नौकर भी कर सकता है।' फोर्ड ने उत्तर दिया, 'मैं शुरू में साधारण व्यक्ति था। अपना काम स्वयं करता था। हाथों से किए गए कठोर परिश्रम के कारण ही मैं आज कारखानों का मालिक बन पाया हूं। मैं उन दिनों को न भूल जाऊं, इसीलिए अपने काम स्वयं अपने हाथों से करता हूं।'

भारतीय उद्योगपति हेनरी की सादगी तथा निरभिमान को देखकर हतप्रभ रह गया।

(अमर उजाला आर्काइव से)

अमर उजाला — पुराने पन्नों से — 6 जनवरी, 1955

यूरोप में भारी हिमपात से रेल सेवा बाधित

यूरोप में भारी हिमपात: रेलें बंद

लंदन, ५ जनवरी। यूरोप में इन दिनों कड़ाके की सरदी पड़ रही है। अनेक स्थानों पर बर्फ गिरने के कारण मार्ग रुक गये हैं। रेलवे लाइनें बर्फ से ढकी हुई हैं जिसके फलस्वरूप रेलों का चलना रुक गया है। अनेक स्थानों पर कई कई इंच गहरी बर्फ गिरी है।

यूरोप में इन दिनों कड़ाके की सर्दी पड़ रही है। अनेक स्थानों पर बर्फ गिरने के कारण सड़क मार्ग बंद हो गए हैं और रेलवे लाइन बर्फ से ढकी होने के कारण रेल सेवा बाधित हो गई है। अनेक स्थानों पर कई-कई इंच मोटी बर्फ जमी है।

अब रावी सिर्फ भारत में बहेगी

राजनीतिक इच्छाशक्ति हो तो कैसे आर्थिक व नौकरशाही संबंधी चुनौतियों को पार किया जा सकता है, शाहपुर कंडी बांध इसका ही उदाहरण है।

केएस तोमर — बांध

बात 2016 की है, जब प्रधानमंत्री मोदी ने दूरदर्शिता का परिचय देते हुए जम्मू-कश्मीर व पंजाब के लाखों किसान परिवारों के हित में रावी नदी के पानी को पाकिस्तान जाने से रोकने का साहसी फैसला लिया था। यह फैसला अब हकीकत बन गया है। शाहपुर कंडी बांध के पूरा होने और पाकिस्तान को पानी रोकने से दोनों राज्यों के किसानों के चेहरे पर खुशी लौट आई है। अब जम्मू के कठुआ और सांबा जिलों की 1,27,587 बीघे और पंजाब की 20,624 बीघे जमीन की सिंचाई सुनिश्चित हो सकेगी। देश के सर्वोच्च हितों का ख्याल रखते हुए और 1960 की सिंधु जल संधि की मूल भावना के अनुरूप रावी नदी पर 3,300 करोड़ रुपये की लागत से तैयार शाहपुर कंडी परियोजना जम्मू व पंजाब के लिए समृद्धि के एक नए युग की शुरुआत करेगी।

यह कठुआ और सांबा जिले के लिए 32 वर्षों बाद एक सपने के सच होने जैसा है, क्योंकि यहां के लोगों

को सिंचाई सुविधाओं की कमी के चलते परेशानी उठानी पड़ती थी। इसके अलावा, इस वर्ष के अंत तक तैयार होने वाली 206 मेगावाट की परियोजना से पंजाब के किसान लाभान्वित होंगे। इस पूरे मामले में पाकिस्तान ने सतर्कतापूर्ण चुप्पी साधी हुई है।

पहले कहा जा रहा था कि रावी का पानी रोके जाने पर पाकिस्तान में काफी हल्ला मचेगा, लेकिन अगर ऐसा नहीं हुआ, तो इसकी वजह है कि 1960 की सिंधु जल संधि के प्रावधानों का कहीं कोई उल्लंघन नहीं हुआ है। इस संधि के अनुसार, रावी, सतलज व ब्यास नदी के पानी पर भारत का और झेलम, सिंधु व चिनाब के पानी पर पाकिस्तान का विशेष अधिकार होगा। प्रधानमंत्री मोदी ने 2016 में ही घोषणा की थी कि भारत रावी, सतलज व ब्यास नदियों के पानी के समुचित उपयोग व पाकिस्तान में बहने वाले पानी की बर्बादी को रोकने के लिए तार्किक कदम उठाएगा। तीनों नदियों के पानी के उपयोग और इसे जम्मू-कश्मीर व पंजाब के किसानों को उपलब्ध कराने की पद्धति का अध्ययन करने के लिए एक टास्क फोर्स का भी गठन किया गया था।

इससे पहले 1995 में पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय नरसिंह राव ने शाहपुर कंडी बांध की आधारशिला रखी, लेकिन यह पंजाब व जम्मू-कश्मीर सरकारों की खींचतान में उलझ कर रह गया। राजनीतिक वजहों से इसके क्रियान्वयन में जो साढ़े चार वर्ष की देरी हुई, उससे इसकी लागत 2,793 करोड़ रुपये से बढ़कर 3,300 करोड़ रुपये हो गई। प्रधानमंत्री मोदी के हस्तक्षेप व प्रधानमंत्री कार्यालय में केंद्रीय राज्य मंत्री, जो खुद जम्मू के निवासी हैं, के प्रयासों से गाड़ी फिर से पटरी पर लौटी और केंद्रीय जल शक्ति मंत्रालय से इसके लिए आवश्यक वित्त की व्यवस्था हुई। पंजाब के पूर्व मुख्यमंत्री अमरिंदर सिंह ने केंद्र को अपना हिस्सा साठ से घटाकर चौदह फीसदी करने के लिए राजी किया। इस परियोजना में 71.39 फीसदी बिजली और 28.61 फीसदी सिंचाई से जुड़े घटक भी शामिल हैं। केंद्र ने इसे नाबार्ड के जरिये वित्तपोषित किया है। पंजाब के पठानकोट जिले में रावी नदी पर वर्तमान सागर बांध के डाउनस्ट्रीम पर स्थित शाहपुर कंडी बांध की ऊंचाई 55.5 मीटर है। इसमें दो पावर हाउस भी हैं, जो राजस्व कमाने के लिए सिंचाई और बिजली के दोहरे उद्देश्यों को पूरा करेंगे। विशेषज्ञों का मानना है कि इस परियोजना से जम्मू के किसानों की बंजर जमीन का शाप खत्म हो सकेगा, जो कि कंडी का शाब्दिक अर्थ है। इस परियोजना से हरियाली बंजर भूमि का स्थान लेगी और बाढ़ व तबाही का नियमित खतरा कम हो जाएगा। 1,378 मीटर की तीसरी जे एंड के नहर कठुआ के 512 गांवों की छह लाख से ज्यादा आबादी और सांबा के 368 गांवों की तीन लाख से ज्यादा आबादी को सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराएगी।

इसके अलावा, जम्मू-कश्मीर को रावी से 6.9 लाख एकड़ फीट पानी की पात्रता के अलावा 3.40 रुपये प्रति यूनिट की दर से परियोजना से उत्पन्न 20 फीसदी बिजली मिल सकेगी। इस परियोजना से दोनों राज्यों की पर्यटन क्षमता में भी इजाफा होगा। विश्लेषकों का मानना है कि राजनीतिक इच्छाशक्ति नौकरशाही संबंधी बाधाओं व वित्तीय चुनौतियों को खत्म कर देती है। शाहपुर कंडी बांध परियोजना में ठीक यही दिखा। लेकिन अंततः यह जम्मू-कश्मीर व पंजाब के किसानों के उदास चेहरों पर खुशियां लेकर आई है।

कल्पमेधा

संस्कृति के नैतिक विकास का सबसे ऊंचा स्तर तब आता है, जब हम अपने विचारों को नियंत्रित करना सीख जाते हैं।

- चार्ल्स डार्विन

दलगत बाड़बंदी

राज्यसभा के ताजा चुनाव में, खासकर उत्तर प्रदेश और हिमाचल प्रदेश में, जिस तरह विधायकों के दल की सीमा लांघ कर मतदान करने की खबरें आईं, उससे एक बार फिर राजनेताओं की दलगत निष्ठा और दलबदल कानून की प्रासंगिकता पर सवाल गहरे हुए हैं। हालांकि इससे विपक्षी गठबंधन के भविष्य को लेकर भी अटकलबाजियों को बल मिला है। बताया जा रहा है कि उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी के कुछ विधायकों ने भाजपा के प्रत्याशी को मतदान किया, तो कुछ उसके समर्थन में मतदान से अनुपस्थित रहे। हिमाचल प्रदेश में भी कांग्रेस के कुछ विधायकों के भाजपा प्रत्याशी के पक्ष में मतदान करने के दावे किए जा रहे हैं। दोनों जगह विधायकों के इस तरह दगा करने के पीछे मुख्य वजह पार्टी आलाकमान से नाराजगी बताई जा रही है। उत्तर प्रदेश में तो समाजवादी पार्टी प्रमुख के सबसे भरोसेमंद और पार्टी के मुख्य सचेतक ही बाड़बंदी तोड़ कर भाजपा के पाले में चले गए। कुछ दिनों पहले ही उत्तर प्रदेश में सपा और कांग्रेस ने मिल कर लोकसभा चुनाव लड़ने का फैसला किया है। मगर राज्यसभा चुनाव में इस तरह सपा विधायकों के मतभेद उभरने और एक तरह से खुल्लमखुल्ला बगावत से लोकसभा चुनाव में पार्टी पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों के आकलन गलत नहीं कहे जा सकते।

हिमाचल प्रदेश विधानसभा में कांग्रेस की स्थिति मजबूत है, भाजपा और उसकी सीटों का अंतर भी काफी है, इसलिए वहां कोई खतरा नहीं माना जा रहा था। मगर हकीकत यह भी है कि वहां शक्ति के कई केंद्र बन चुके हैं। मगर उत्तर प्रदेश में विधायकों का असंतोष किसी पद को लेकर नहीं, बल्कि पार्टी अध्यक्ष के व्यवहार से उपजा अधिक जान पड़ता है। जैसा कि कुछ विधायकों ने जाहिर भी किया कि सपा अध्यक्ष अखिलेश यादव का रुक्ष व्यवहार उन्हें खटकता है। उनके सबसे करीबी माने जाने वाले और पार्टी के मुख्य सचेतक ने पत्र लिख कर राज्यसभा चुनाव में अपनी जिम्मेदारी से मुक्ति की प्रार्थना की थी। बताया जा रहा है कि वे भाजपा में शामिल होने वाले हैं। राजनीतिक दलों के संचालन में मुखिया का व्यवहार बहुत मायने रखता है। अगर अखिलेश यादव अपने नेताओं और साथी संगठनों को साथ लेकर चल पाने में असमर्थ साबित हो रहे हैं, तो यह उनकी पार्टी के लिए अच्छा संकेत नहीं माना जा सकता।

हालांकि राज्यसभा चुनाव में दलीय बाडबंदी को धता बताते हुए दूसरे दल के प्रत्याशी के पक्ष में मतदान करना कोई नई बात नहीं है। कई विधायक दूसरे दल के प्रत्याशी को इसलिए भी मतदान कर देते हैं कि उससे उनके अच्छे संबंध होते हैं। हिमाचल प्रदेश में यह गणित भी काम आया। मगर इस तरह राजनेताओं की निष्ठा तो प्रश्नांकित होती ही है। न केवल पार्टी के प्रति, बल्कि उन मतदाताओं के प्रति भी, जिनके मतदान से उन्होंने विजय हासिल की है। इसी प्रवृत्ति पर रोक लगाने के मकसद से दलबदल कानून बना था, मगर उसकी काट अक्सर निकाल ली जाती है। महाराष्ट्र और गोवा इसके सबसे बड़े उदाहरण हैं, जहां दूसरी पार्टी से चुनाव जीत कर आए विधायक उन्हीं दलों से हाथ मिला कर सरकार में शामिल हो गए, जिसके खिलाफ चुनाव लड़े थे। ऐसे मामलों में न तो पार्टियां कुछ कर पाती हैं और न चुनाव आयोग कोई ठोस रास्ता निकाल पाता है। इसलिए दलबदल कानून को नए सिरे से प्रभावशाली बनाने की अपेक्षा स्वाभाविक है।

नाहक जिद

प्रवर्तन निदेशालय यानी ईडी ने शराब घोटाला मामले में दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल को आठवीं बार समन भेजा है, मगर अब तक वे कोई न कोई वजह बता कर उसके सामने पेश होने से बचते रहे हैं। अब उनका कहना है कि अगर अदालत इस संबंध में आदेश देगी तभी वे प्रवर्तन निदेशालय के सामने पेश होंगे। हालांकि यह समझना मुश्किल है कि किसी सरकारी एजंसी की ओर से इस तरह बार-बार समन भेजे जाने की अनदेखी करने की वजह क्या सिर्फ खुद को निर्दोष मानना है या फिर आंख-मिचौली जैसा कोई खेल है, जिसमें आखिरकार उनसे पूछताछ होनी ही है। अगर उन्हें लगता है कि ईडी बिना किसी ठोस आधार के उन्हें बुला रही है, तो समूचे मामले को पारदर्शी तरीके से उसके सामने रख देने में उन्हें क्यों हिचक हो रही है! फिर अगर आने वाले दिनों में अदालत ने उन्हें ईडी के सामने पेश होने का आदेश दे दिया, तब उनके मौजूदा रुख को किस तरह देखा जाएगा?

गौरतलब है कि दिल्ली सरकार ने सन 2021-22 के लिए आबकारी नीति के तहत जिन शराब व्यापारियों को लाइसेंस जारी किए थे, उन पर इसके लिए रिश्वत देने का आरोप है। मनपसंद कारोबारियों को लाइसेंस जारी किए गए। हालांकि आम आदमी पार्टी ने इन आरोपों को गलत बताया है, लेकिन अगर उसके वरिष्ठ नेता मनीष सिसोदिया ऐसे ही आरोपों के तहत हुई पूछताछ के बाद जेल में हैं और मुकदमे का सामना कर रहे हैं तो उसका कोई न कोई ठोस आधार होगा! शायद यही वजह है कि अब ईडी सरकार में सबसे अहम पद पर होने की वजह से अरविंद केजरीवाल को पेश होने के लिए कह रही है। अगर केजरीवाल को लगता है कि इस मामले में वे पूरी तरह पाक-साफ हैं तो पूछताछ से बचने के बजाय वे सारी तस्वीर सामने रख दे सकते हैं। यह याद किया जा सकता है कि उनके मौजूदा राजनीतिक सफर में भ्रष्टाचार के विरुद्ध आंदोलन छेड़ने, आरोपों पर जवाब देने और उसमें पारदर्शिता बरतने की मांग की एक बड़ी भूमिका रही है। इसलिए अब अगर भ्रष्टाचार के आरोपों के संदर्भ में उनसे पूरी तरह स्पष्टता और पारदर्शिता की उम्मीद की जा रही है, तो यह स्वाभाविक ही है।

परीक्षा से पहले पर्चा बाहर

आज देश का शायद ही कोई ऐसा कोना बचा हो, जहां पर्चाफोड़ कराने वाले गिरोहों ने कोई कारनामा न किया हो। राज्य बोर्ड ही नहीं, सीबीएसई जैसे विश्वसनीय शैक्षणिक संगठन में भी पर्चाफोड़ गिरोह सेंध लगा चुके हैं।

अभिषेक कुमार सिंह

उत्तर प्रदेश में पुलिस भर्ती परीक्षा, रद्द होने के कारण चर्चा का विषय बन गई है। इस परीक्षा में पचास लाख से ज्यादा युवाओं ने हिस्सा लिया था। परीक्षा से पहले पर्चा बाहर आ जाने की वजह से इसे रद्द कर दिया गया। व्यवस्था को कोसते हताश-निराश युवाओं के पास अब इसके सिवा कोई चारा नहीं है कि वे इसके लिए फिर से मेहनत करें और दूसरी परीक्षाओं में बैठने की उम्र निकल जाने का पछतावा करें।

अहम प्रतियोगी परीक्षाओं और प्रतिष्ठित पाठ्यक्रमों की प्रवेश परीक्षाओं के पर्चे अगर 'लीक' हो जाएं, भर्तियों में पैसे लेकर धांधली की जाए या सांठगांठ कर नकल कराते हुए परीक्षार्थियों को उत्तीर्ण करा लिया जाए, तो सबसे ज्यादा कष्ट उन परीक्षार्थियों और उम्मीदवारों को होता है, जो प्रतिभा के बल पर किसी परीक्षा में अपनी योग्यता साबित करने का जतन करते हैं। कुछ ऐसा ही यूपी पुलिस भर्ती परीक्षा में हुआ है। इस घटना ने एक बार फिर साबित कर दिया है कि हमारे परीक्षा तंत्र में ऊपर से नीचे तक घुन कितने गहरे तक लगे हुए हैं और वे किस तरह पूरी व्यवस्था को खोखला कर रहे हैं। सरकार कह रही है कि वह प्रतिभाशाली और मेहनती युवाओं के साथ अन्याय नहीं होने देगी। मगर क्या सच में इंसाफ होगा! अब भी इसकी कोई गारंटी नहीं कि पर्चा बाहर होने जैसी घटना दोबारा नहीं होगी।

पर्चे बाहर होने का सिलसिला हाल के वर्षों में इतना बढ़ा है कि शायद ही कोई प्रतिष्ठित परीक्षा इसकी आंच से बच पाई हो। यूपी-पीसीएस, यूपी कंबाइंड प्री-मेडिकल टेस्ट, यूपी-सीपीएमटी, एसएससी, ओएनजीसी और रेलवे भर्ती बोर्ड की परीक्षाओं के पर्चे बड़े पैमाने पर लीक हुए हैं। यह भी पता चला है कि कई-कई लाख रुपए में बिके प्रश्नपत्र और उनके उत्तर सोशल मीडिया पर मुहैया कराए गए। यह भी संभव है कि जिन मामलों का खुलासा नहीं हुआ, वहां ऐसे चोर रास्तों से शायद सैकड़ों लोग नौकरी या प्रतिष्ठित पाठ्यक्रमों में दाखिला पा गए हों। ऐसे में यह सवाल बना हुआ है कि क्या कभी हमारी प्रतियोगी परीक्षाएं इस बीमारी से निजात पा सकेंगी। हाल में, संसद के बजट सत्र में लोकसभा में सार्वजनिक परीक्षा (अनुचित साधनों की रोकथाम) विधेयक, 2024 पारित किया गया। सरकार का दावा है कि इससे देश में हर किस्म की परीक्षाओं में नकल और पर्चाफोड़ आदि पर पूरी तरह पाबंदी लग जाएगी। इस विधेयक में पर्चा 'लीक' जैसे कारनामों के दोषियों को तीन से दस साल की सजा और न्यूनतम एक करोड़ रुपए के जुर्माने के प्रावधान किए गए हैं। मगर इस प्रस्तावित कानून के बावजूद यह आश्वस्ति नहीं बन पा रही कि परीक्षाओं को सच में कदाचार से मुक्त कराया जा सकता है।

आज देश का शायद ही कोई ऐसा कोना बचा हो, जहां पर्चाफोड़ कराने वाले गिरोहों ने कोई कारनामा न किया हो। राज्य बोर्ड ही नहीं, सीबीएसई जैसे विश्वसनीय शैक्षणिक संगठन में भी पर्चाफोड़ गिरोह सेंध लगा चुके हैं। पर्चा बाहर कराने वाले कुछ लोगों की गिरफ्तारी भी हुई है। बताते हैं कि कुछ गिरोह मेडिकल प्रवेश परीक्षा के पर्चे दस-बारह लाख रुपए तक में बेचा करते थे। ये घटनाएं योग्यता का मापदंड तय करने वाली परीक्षा प्रणाली के लुंजपुंज हो जाने का प्रमाण हैं। इससे यह भी साबित होता है कि शासक वर्ग पर्चाफोड़ की घटनाओं को बहुत हल्के में लेता है, अन्यथा अब तक इस समस्या का समाधान हो चुका होता। इन घटनाओं के कुछ कारण स्पष्ट हैं।

> इस गोरखधंधे के फूलने-फलने का एक पहलू यह भी है कि ज्यादातर घटनाओं में तंत्र में शामिल लोगों की ही भूमिका होती है। यूपी की पुलिस भर्ती परीक्षा का पर्चा छापेखाने से ही बाहर हुआ बताया जा रहा है। जाहिर है, इसमें वहां के किसी कर्मचारी-अधिकारी की भूमिका रही होगी। छापेखाने में कड़े सुरक्षा इंतजाम के बीच मौजूद पर्चों तक आम अपराधी की पहुंच हो पाना असंभव है। यह भी एक वजह है कि ज्यादातर पर्चाफूट कांडों में पकड़े गए लोगों को नाममात्र सजाएं हुईं। कुछ महीने की जेल काटने के बाद ये लोग फिर उसी धंधे में लग जाते हैं।

ऐसी ज्यादातर परीक्षाओं में कुछ सौ या हजार पदों के लिए आवेदकों की संख्या लाखों में होती है। यूपी में ट्यूबवेल आपरेटर के पद 3200 हैं, पर इसके लिए दो लाख से ज्यादा आवेदक थे। अन्य सरकारी नौकरियों और मेडिकल तथा इंजीनियरिंग कालेजों की प्रवेश परीक्षा में तो आठ-दस लाख परीक्षार्थी शामिल होते हैं। इसका मतलब यह है कि चाहे पेशेवर पाठ्यक्रम की बात हो या नौकरी की- हर जगह स्थिति एक अनार-सौ बीमार वाली है। मांग ज्यादा है, आपूर्ति कम। जहां भी ऐसे हालात पैदा होते हैं, वहां पैसे और अवैध हथकंडों की भूमिका स्वाभाविक रूप से बढ़ जाती है।

इस गोरखधंधे के फूलने-फलने का एक पहलू यह भी है कि ज्यादातर घटनाओं में तंत्र में शामिल लोगों की ही भूमिका होती है। यूपी की पुलिस भर्ती परीक्षा का पर्चा छापेखाने से ही बाहर हुआ बताया जा रहा है। जाहिर है, इसमें वहां के किसी कर्मचारी-अधिकारी की भूमिका रही होगी। छापेखाने में कड़े सुरक्षा इंतजाम के बीच मौजूद पर्चों तक आम अपराधी की पहुंच हो पाना असंभव है। यह भी एक वजह है कि ज्यादातर पर्चाफूट कांडों में पकड़े गए लोगों को नाममात्र सजाएं हुईं। कुछ महीने की जेल काटने के बाद ये लोग फिर उसी धंधे में लग जाते हैं। मगर कुछ कारण समाजशास्त्रीय भी हैं, जो इस तंत्र से बाहर आम लोगों के नजरिए का खुलासा करते हैं। असल में, हमारे आम समाज के भीतर पर्चाफोड़ और नकल आदि कदाचार में सबसे बड़े अपराधी छिपे हुए हैं, पर समस्या यह है कि न तो पुलिस इनकी धर-पकड़ कर सकती है और न कानून में ऐसे लोगों के लिए कोई सजा मुकर्रर है। ये लोग वे हैं जो पैसे के बल पर अपनी संतानों को नौकरी और सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाने के लिए वैध-अवैध हर हथकंडा अपनाना चाहते हैं। देश का संपन्न वर्ग पैसा खिलाकर या तो पर्चाफोड़ करवा कर या भारी-भरकम डोनेशन देकर इंजीनियरिंग या मेडिकल कालेज की वह सीट खरीद लेता है, जिस पर कायदे से किसी प्रतिभावान और योग्य उम्मीदवार का हक होना चाहिए था। हालांकि इससे तंत्र में मौजूद उन लोगों का अपराध कम नहीं हो जाता, जो चंद पैसों के लिए नकल और पर्चाफोड़ माफिया को प्रश्नपत्र मुहैया कराते या परीक्षा प्रणाली में सेंध लगाते हैं।

अहम सवाल है कि आखिर समस्या सुलझाई कैसे जाए। दरअसल, बात चाहे प्रतियोगी परीक्षाओं की हो या भर्ती बोर्डों के जरिए मिलने वाली नौकरियों के लिए प्रतियोगी परीक्षाओं की, बेरोजगारी और जनसंख्या का असंतुलित अनुपात इन सब पर भारी दबाव बनाए हुए है। रोजगार और शिक्षा में यह असंतुलन भी पर्चाफोड़ की समस्या को गहरा करता है। जब तक कथित तौर पर मलाईदार नौकरियों के लिए मारामारी होती रहेगी, पर्चाफोड़ जैसे चोर रास्तों का दरवाजा हमेशा खुला रहेगा। इसलिए दोषियों की धर-पकड़ के साथ-साथ समस्या के सही निदान का प्रयास भी करना होगा। पिछले कुछ दशकों में जिस तरह शिक्षा सीधे-सीधे रोजगार से जुड़ गई है, उसमें ऐसे नैतिक पतन की गुंजाइशों के लिए भी काफी बड़ी जगह बन गई है। शिक्षा को अब सिर्फ रोजगार से जोड़कर न देखा जाए, बल्कि उसे समाज से भी जोड़ा जाए। यह काम सिर्फ समाजसेवक नहीं करेगा, बल्कि नेताओं, शिक्षाविदों, प्रशासकों और अभिभावकों को भी मिलकर करना होगा।

संतुलन का संसार

रितुप्रिया शर्मा

मनुष्य होने के नाते हम सभी यह जानते हैं कि सामाजिकता हमारा मूल स्वभाव है और इसी के नाते हमारी यह कोशिश रहती है कि हम समाज के सभी अंगों से जुड़े रहें। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए हम कई तरह के प्रयास करते हैं। हम न केवल अपने आस-पड़ोस और रिश्तेदारों से संबंधों को मजबूत बनाते हैं, बल्कि दूसरे लोगों से भी जुड़ने का प्रयास करते हैं। यह बहुत स्वाभाविक है कि हमारे इस सामाजिक जीवन में हमें कई तरह की कठिनाइयों से भी गुजरना पड़ता है। इसके बावजूद हम अपने सामाजिक संबंधों को बनाए रखते हैं। सुख और दुख जीवन के दो पहलुओं का नाम है, क्योंकि ये सदा ही साथ चलते आए हैं। मानव-जीवन ही सुख-दुख की छाया है। एक सामाजिक प्राणी और मनुष्य होने के कारण हमारा परम कर्तव्य है कि हम एक-दूसरे के सुख-दुख को समझें। प्रश्न यह उठता है कि व्यक्तिगत रूप से हमारा एक-दूसरे के प्रति कैसा भाव है? अगर हम अपने हृदय में वसुधैव कुटुंबकम का भाव रखते हैं तो हम भाईचारे की पक्की नींव रख सकते हैं। मनुष्य से संबंध अत्यंत अटूट है, लेकिन इतना होना पर्याप्त नहीं है, क्योंकि आज का युग नितांत व्यक्तिगत हो गया है।

वैयक्तिकता किस सीमा तक हो? जीवन पूरी तरह सार्वजनिक नहीं जिया जा सकता है। इसलिए निजता और सामाजिकता के बीच का उचित तालमेल स्थापित करना ही होगा। आज हमारा सामाजिक दायरा सोशल मीडिया द्वारा निर्धारित हो रहा है। यही यह तय करता है कि किसी क्षेत्र में हम कितने सफल हैं, कितने सामाजिक हैं और क्या कर रहे हैं। क्या वाकई हम सभी लोग सारा सच सोशल मीडिया पर व्यक्त कर सकते हैं? क्या सोशल मीडिया अभिव्यक्ति के सामाजिक होने की खानापूर्ति नहीं बनती जा रही है? ये प्रश्न हमारी सामाजिकता के प्रति एक अलग सोच को अभिव्यक्त करते हैं। सबसे जरूरी बात यह है कि क्या यही हमारा कर्तव्य है समाज के लिए कि किसी घटना पर सोशल मीडिया पर विचार प्रकट किए जाएं और बस काम हो गया!

माना जा सकता है कि आज के दौर में इसका महत्त्व है, लेकिन हमें खुद समाज के बीच उतरकर प्रयास का अमृत बरसाना होगा। निजता को हावी नहीं होने देने को कहा जाता है, वहीं अपने व्यक्तिगत जीवन की उपादेयता को भी सर्वोपरि रखना चाहिए। हमें संतुलन की ओर बढ़ना होगा, वरना संतुलन का अभाव हमें कहीं का नहीं छोड़ेगा। जिस तरह से हम मोबाइल और लैपटाप को अपने निजी जीवन में एक जरूरी आवश्यकता के तौर पर ले रहे हैं, उसमें वह दिन दूर नहीं है, जब हम पूरी तरह इन पर ही निर्भर हो जाएंगे।

कोई भी सोशल मीडिया मंच कभी भी मूल कार्यक्रम और सेवाओं की जगह नहीं ले सकता। इसके लिए तो समाज में जाकर, लोगों के बीच उनके सुख-दुख में सहयोग देकर, सहायता और उत्साह भर कर ही हम सामाजिक-सार्वजनिक जीवन की उपादेयता सिद्ध कर सकते हैं। सोशल मीडिया मंच पर विचार प्रकट करना कोई बुरी बात नहीं है। इससे भी लोगों में जागरूकता आती है, लेकिन ज्यादातर वक्त पर ये सब चीजें लोगों के वक्त गुजारने का एक तरीका मात्र है। कई बार तो इनका इतना नकारात्मक प्रभाव होता है कि लोग अपनी मूल विचारधारा को ही भूल जाते हैं।

सोशल मीडिया मंचों पर कई बार ऐसे मुद्दों पर बात की जाती है, जो समाज की एकता के लिए बहुत ही खतरनाक साबित हो सकते हैं। हम एक लोकतांत्रिक देश में रहते हैं, जिसमें सभी लोग समान हैं, लेकिन कई बार इन मंचों के जरिए अफवाहें उड़ाई जाती हैं, जिसके घातक नतीजे सामने आते हैं। प्रामाणिक खबरों पर विश्वास करना चाहिए, वरना अव्यवस्था फैल जाएगी।

आज भी अखबारों का महत्त्व कम नहीं हुआ है। समाचारों की अहमियत तब होती है, जब वे प्रामाणिक हों और इसके लिए लोग इन्हें विश्वसनीय मानते हैं। जबकि सोशल मीडिया से सबसे ज्यादा हमारी युवा पीढ़ी प्रभावित हो रही है। उनका ज्यादातर वक्त पढ़ाई-लिखाई और काम करने के बजाय इन्हीं चीजों में गुजर रहा है। कई बार तो बच्चे इनमें उलझकर अपने जीवन को भी बर्बादी की ओर ले जाते हैं। किसी चीज को जान-समझ कर अपनाने में कोई बुराई नहीं है। मगर इन मंचों में लीन युवा आज सामाजिक तो दूर, वे अपने परिवार से भी दूर होते चले जा रहे हैं। घरवाले अगर कोई काम करने को कहते हैं, उनका मानना होता है कि उनका वक्त बर्बाद हो रहा है और सोशल मीडिया मंचों पर कितना वक्त बेकार चला जाता है, उन्हें पता भी नहीं चलता। मनोरंजन, गेम और बातचीत के नाम पर अपने परिवार को ही दरकिनार कर दिया जाता है। ऐसे में निजी और सार्वजनिक जीवन को संतुलित बनाने की जरूरत है।

इससे इतर कई युवा दंपतियों का गृहस्थ-जीवन सोशल मीडिया ने बर्बाद कर दिया है। एक-दूसरे के प्रति शक और सामंजस्य की कमी को बढ़ाया है। बुजुर्ग मां-पिता के प्रति अपना ध्यान केंद्रित करने के बजाय लोग अपने महंगे स्मार्टफोन पर अधिक ध्यान देते हैं। सामाजिक कर्तव्य के नाम पर कोई टिप्पणी लिख देना फैशन है। लोग नहीं समझ पा रहे है कि इसका कोई रचनात्मक पहलू निकाला जाए और समाज को कुछ अच्छा दिया जाए। सोशल मीडिया मंचों पर जाने में बुराई नहीं है, मगर इसका मतलब यह नहीं है कि इनकी वजह से हम अपना सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन और उसका स्वरूप बिगाड़ लें। दोनों चीजों से संतुलन बनाए रखना हमारी आवश्यकता है।

दुनिया मेरे आगे

> को ई भी सोशल मीडिया मंच कभी भी मूल कार्यक्रम और सेवाओं की जगह नहीं ले सकता। इसके लिए तो समाज में जाकर, लोगों के बीच उनके सुख-दुख में सहयोग देकर, सहायता और उत्साह भर कर ही हम सामाजिक-सार्वजनिक जीवन की उपादेयता सिद्ध कर सकते हैं।

वादों के बजाय

धरातल छोड़ आसमान पर उड़ने वाली और बड़ी-बड़ी बातें करने वाली सरकार को सिर्फ देश के बेरोजगार और किसान जागरूक हो गए, तो मुश्किल सवालों में डाल सकते हैं। किसानों की आय लागत से भी कम है और बेरोजगार लाखों खाली पदों के बावजूद सड़कों पर भटक रहे हैं। सरकार सूचना तकनीक क्षेत्र में उपलब्धियों का हवाला देकर वाहवाही लूट रही है। मगर सवाल है कि केवल इस क्षेत्र में पैदा हुए अवसरों के बूते व्यापक स्तर पर पसरती बेरोजगारी की समस्या को कैसे सुलझाया जा सकता है।

शिक्षा का वर्गीकरण इतना हो गया है कि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पाने के लिए लाखों की जरूरत है। धर्म के नाम पर सभी को नहीं बहलाया जा सकता है। जिन राज्यों में अधिक शिक्षा है, वहां सिर्फ वादों और भाषणों का जादू नहीं चलता। भाषणों में गारंटी के बजाय बेरोजगारी हटाने, किसानों से किए गए वादे निभाने की, पुरानी पेंशन बहाल करने की, महंगाई कम करने, रुपए का मूल्य बढ़ाने, सबको शिक्षा एक समान करने की जरूरत है। अगर देशवासियों ने सही तरीके से सरकार की कार्यों की पड़ताल कर ली, तो सरकार को जवाब देना मुश्किल हो जाएगा।

- प्रसिद्ध यादव, बाबूचक, पटना

विवाद के नाम

शेक्सपियर ने कहा था कि नाम में क्या रखा है। नाम तो सिर्फ एक शख्स की पहचान के लिए रखा जाता है, लेकिन कुछ लोगों के लिए नाम में ही बहुत कुछ रखा है। सरकारी पदों पर होते हुए भी अपने राजनीतिक आकाओं को खुश करने के लिए वे कुछ भी कर सकते हैं। लगता है कि राजनीति एक ऐसी कला है, जिसमें जानबूझ कर विवाद पैदा किए जाते हैं और फिर उन विवादों का गलत तरीके से हल निकाला जाता है। राजनीति के बयानवीर अपने वोट बैंक को देखकर बयान देते हैं और वोटों के चक्कर में विवाद पैदा करते हैं। पश्चिम बंगाल के एक चिड़ियाघर में एक शेर और शेरनी के नाम पर विवाद हो गया। चिड़ियाघर के जिन अधिकारियों ने उन जानवरों का नामकरण किया, क्या उन्हें मालूम नहीं था कि इन नाम से विवाद पैदा होगा? क्या जानबूझकर ऐसा किया गया? सभी को पता है कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है और संविधान ने हमें कुछ भी खाने, पहनने, कहीं भी आने-जाने की पूरी आजादी दी है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हम लोगों की भावनाओं को आहत करें।

- चरनजीत अरोड़ा, नरेला, दिल्ली

फिजूलखर्च और हादसे

देश के विभिन्न हिस्सों में संचालित अवैध पटाखा फैक्ट्री पर पूर्णत पाबंदी लगाई जानी चाहिए। लगातार पटाखा फैक्ट्री में हो रहे विस्फोटों और पटाखा चलाते समय युवाओं के हाथ जल जाने की घटनाएं आम हो गई हैं। ऐसे में सरकार को चाहिए कि अवैध पटाखा फैक्ट्रियों पर पूरी तरह पाबंदी लगाए, जिससे ग्रामीण और शहरी युवाओं को इनसे होने वाली दुर्घटनाओं से बचाया जा सके। यों भी पटाखे उत्सव में खुशी जाहिर करने का तरीका भले माने जाएं, मगर सच यह है कि ये फिजूलखर्ची का भी एक बड़ा उदाहरण हैं। खुशी और उल्लास जाहिर करने के और भी तरीके हो सकते हैं। अगर लोग विकल्पों की ओर बढ़ेंगे, तो पटाखों का बाजार अपने आप ही कमजोर होता जाएगा।

- कुमेर सिंह गुर्जर, राजस्थान

आंदोलन और असुविधा

दिल्ली ही नहीं, आसपास की सब्जी मंडियों में जहां भी किसानों का प्रदर्शन जारी है, सब्जियां और दूसरी खाद्यान्न पदार्थ की आवाजाही पर प्रतिकूल असर पड़ा है। सब्जियां न केवल महंगी होती जा रही हैं, बल्कि मंडियों में सब्जियों की भारी कमी भी देखी जा रही है। सब्जियों के फुटकर विक्रेताओं से लेकर व्यापारियों को नुकसान न उठाना पड़े, इसके लिए केंद्र और राज्य सरकारों को मिलकर काम करना होगा। सब्जी व्यापार में लगे वाहन मालिकों की भी समस्याएं बड़ी होने वाली हैं, क्योंकि आवागमन के रास्ते ही नहीं मिलेंगे और इनके सब्जियों से भरे ट्रक जाम में फंसकर रह जाएंगे। किसानों के आंदोलन से सब्जी उत्पादन से लेकर विक्रेताओं तक जुड़े मजदूरों को बड़ी समस्या होगी तो इनका जीवनयापन भी दुर्लभ हो जाएगा। इस मानवीय पक्ष पर सभी को सोचना चाहिए।

- वीरेंद्र कुमार जाटव, दिल्ली

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

नई दिल्ली

www.readwhere.com

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 11

जवाबदेह नवाचार

भारतीय रिजर्व बैंक ने हाल ही में पेटीएम पेमेंट्स बैंक के खिलाफ जो नियामकीय कदम उठाया है उसने व्यवस्था में काफी असहजता पैदा की है। खासतौर पर तेजी से बढ़ते फिनटेक कारोबार में इसे लेकर असहज माहौल बना है। नियामक ने यह स्पष्ट किया है कि उसने उक्त कदम कंपनी के साथ पर्याप्त द्विपक्षीय चर्चा के बाद उठाया है जबकि कुछ लोगों का मानना है कि ऐसा नियामक को कारोबार की प्रकृति की पर्याप्त समझ न होने के कारण हुआ है और इससे नवाचार को बढ़ावा मिलना कम हो सकता है। वित्तीय क्षेत्र में नियामक के विरुद्ध ऐसा दृष्टिकोण नया नहीं है। जोखिम को कम करने और वित्तीय स्थिरता बरकरार रखने के लिए नियामकीय हस्तक्षेप अल्पावधि में वृद्धि और विनियमित कंपनियों को प्रभावित करते हैं और अक्सर उन्हें लेकर ऐसी टिप्पणियां देखने को मिलती हैं। चाहे जो भी हो यह भी सही है कि नियामकों को एक बारीक संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता होती है और कोशिश होनी चाहिए कि बिना वित्तीय स्थिरता के लक्ष्य से समझौता किए नवाचार को बढ़ावा दिया जा सके। इस संदर्भ में केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण के हस्तक्षेप इस लक्ष्य को हासिल करने में दूर तक जाएंगे।

सीतारमण ने सोमवार को फिनटेक कंपनियों के शीर्ष अधिकारियों के साथ एक बैठक में सुझाया कि रिजर्व बैंक फिनटेक और स्टार्टअप की चिंताओं को दूर करने के लिए उनके साथ मासिक बैठक करे। साफ कहें तो नए दौर की फिनटेक कंपनियां ऐसे क्षेत्रों में काम कर रही हैं जहां नियमन स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं हैं। नियामक भी कारोबार तथा उनसे व्यवस्था को उत्पन्न होने वाले संभावित खतरों को समझने की प्रक्रिया में हैं। हालांकि नियामक सभी अंशधारकों के साथ नियमित संवाद करता है लेकिन एक औपचारिक व्यवस्था बनाने से दोनों पक्षों को लाभ होगा। वित्तीय सेवा विभाग से भी कहा गया है कि वे फिनटेक और कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ एक दिन की कार्यशाला का आयोजन करें जहां वे अपनी चिंताएं सामने रख सकती हैं। इससे भी फिनटेक को लाभ होना चाहिए क्योंकि वे अपनी आशंकाएं सामने रख सकती हैं। नियामक और सरकार दोनों अगर फिनटेक की चिंताओं को सुनकर नवाचार को बढ़ावा देने के लिए जरूरी समायोजन करें तो बेहतर होगा।

सरकार ने केंद्रीय वित्त सचिव टी वी सोमनाथन के अधीन एक विशेषज्ञ समिति भी गठित की है ताकि 'अपने ग्राहक को जानें' (केवाईसी) मानकों को एकरूप बनाया जा सके। ग्राहक को जानने के मानकों में सुधार से वित्तीय सेवा कंपनियों और उपभोक्ताओं दोनों को लाभ होगा। ऐसी चिंताएं हैं कि कुछ फिनटेक कंपनियां इन मानकों का पालन नहीं करती हैं। ऐसे में वित्त मंत्री द्वारा समय पर हस्तक्षेप किए जाने से फिनटेक की चिंताओं को दूर करने में मदद मिलेगी और ऐसा नियामकीय माहौल बनेगा जो नवाचार को बढ़ावा देता हो और अंतिम उपभोक्ता को लाभ पहुंचाता हो। फिनटेक कंपनियों का विकास रिजर्व बैंक के लिए चुनौती बना हुआ है। कुछ कंपनियों ने यूनीफाइड पेमेंट इंटरफेस की मदद से भुगतान को सुगम बनाया है तो वहीं बड़ी संख्या में ऐसी कंपनियां बैंकों और गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों से ऋण को सुगम बना रही हैं। इसके परिणामस्वरूप उपभोक्ता ऋण बहुत बढ़ गया है। इस संदर्भ में रिजर्व बैंक ने गत नवंबर में उपभोक्ता ऋण का जोखिम भार बढ़ा दिया। इसके पीछे विचार था असुरक्षित ऋण वृद्धि की गति को धीमा करना।

रिजर्व बैंक ने अलगोरिद्म आधारित ऋण में इजाफे को लेकर भी चिंता जताई है। अगर बिना समुचित जांच परख के उपभोक्ता ऋण बढ़ता है तो इससे बैंकों और गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों दोनों को दिक्कत हो सकती है। यह देखा गया है कि कुछ उपभोक्ता एक से अधिक प्लेटफॉर्म से ऋण लेने में सक्षम हैं। हालांकि यह संभव है कि फिनटेक उन उपभोक्ताओं तक पहुंच रही हों जो औपचारिक ऋण बाजार से बाहर हैं लेकिन फिर भी तब तक सावधानी बरतना आवश्यक है जब तक कि इस पूरी प्रणाली और संभावित निष्कर्षों को अच्छी तरह समझ नहीं लिया जाता है। नवाचार और वृद्धि अनुमानों में संतुलन होना चाहिए और वित्तीय स्थिरता को खतरा उत्पन्न नहीं होने देना चाहिए।

अजय मोहंती

फिनटेक क्रांति का लेखाजोखा

भारत की वित्तीय आर्थिक नीति इसकी संभावनाओं को धूमिल कर रही है। इस संबंध में बता रहे हैं अजय शाह

भारत में मौजूदा वित्तीय प्रणाली की कमजोरी को देखते हुए फिनटेक महत्त्वपूर्ण हो सकते हैं। वित्त का काम जोखिम और समय से बेहतर तरीके से निपटने के लिए वास्तविक अर्थव्यवस्था की मदद करना है। भारत में वित्त सही रहे इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि भौगोलिक और वर्ग की विविधता के साथ रहने वाले लोगों के जीवन को सही बनाने के लिए उत्पादों और प्रक्रियाओं पर जोखिम उठाया जाए और नवाचार किया जाए। यह उस वित्तीय आर्थिक नीति को खारिज करता है जहां सरकार और उसकी एजेंसियां उत्पादों और प्रक्रियाओं पर विस्तृत नियंत्रण के साथ एक केंद्रीय नियोजन प्रणाली चलाती हैं। कानून के शासन की सीमाएं वित्तीय फर्मों को नवाचार करने के प्रति सतर्क करती हैं।

सरकार नियंत्रित एकाधिकार प्रणाली, जो कि राष्ट्रीय चैंपियन है, राज्य के नियंत्रण को गहरा करती है। भारतीय वित्त का भविष्य वित्तीय आर्थिक नीति के बदलाव में ही निहित है।

वित्त का काम लोगों की जोखिम और समय की समस्याओं को दूर करने में मदद करना है। करीब 140 करोड़ लोगों वाले देश के हर 100 सदृश क्षेत्र की अपना अलग लय और ताल है। यहां वर्ग की बहुत ज्यादा विविधता है। लेकिन मौजूदा वित्तीय प्रणाली इसकी विविधता के साथ कदमताल नहीं कर पा रही है।

कई नए कारोबारी मॉडलों और प्रक्रियाओं के स्वरूप के साथ प्रयोग करने के लिए नवाचार और जोखिम की प्रक्रिया जरूरी है जिससे कि लोगों की बेहतर सेवा हो सकती है।

जब आप मुंबई से ठाणे और फिर पुणे जाएं तो पहेलियां बदल जाती हैं। कोई भी सही जवाब नहीं जानता: एक खोज प्रक्रिया की जरूरत है- जहां चतुर फर्में प्रयोग करें, नवाचार करें, जोखिम लें और दिवालिया हो जाएं। इस प्रक्रिया से इस बात का समाधान मिलेगा कि भारत के तमाम उपवर्गों की बेहतर सेवा किस तरह की जाए। हालांकि वित्तीय आर्थिक नीति एक केंद्रीय नियोजन प्रणाली के रूप में तैयार की जाती है। उत्पादों, प्रक्रियाओं और सरकार नियंत्रित एकाधिकार को ऊपर से थोपा जाता है। इसके बाद विशिष्ट भारतीय शैली के केवाईसी और धनशोधन रोकथाम अधिनियम से फर्मों के पर कतरे जाते हैं।

जब केंद्रीय प्रसंस्करण इकाइयां सस्ती हो गईं और इंटरनेट कनेक्टिविटी का प्रसार हुआ तो 'फिनटेक क्रांति' को लेकर काफी उम्मीदें कायम हो गईं। ऐसी सोच थी कि बैंकों का काफी कामकाज नए तरह की टेक्नोलॉजी आधारित फर्मों से किया जा सकता है। इन नए फर्मों से उनका काम बेहतर तरीके से हो पाएगा और देश में बैंकिंग का दायरा सिकुड़ता जाएगा। उदाहरण के लिए गूगल जैसी मोबाइल फोन कंपनियां और टेक्नोलॉजी दिग्गज आसानी से भुगतान कार्य कर सकते हैं, एक ऐसा कारोबार जो कभी बैंकों का आधार था।

ऐसी 'फिनटेक क्रांति' दो तरह के दृष्टिकोण के लिहाज से अच्छी चीज है: (अ) बैंकिंग भारत में प्रणालीगत जोखिम का स्रोत रहा है और छोटी बैंकिंग प्रणाली स्थिरता को बढ़ाती है; (ब) मौजूदा बैंक नवाचार और ग्राहकों की सेवा के मामले में कमजोर हैं, तो जब बैंकों को दायरे में रखे बिना ज्यादा वित्तीय कामकाज होगा, वित्तीय प्रणाली वास्तविक अर्थव्यवस्था की बेहतर सेवा कर पाएगी।

हम करीब 20 साल से यही कहानी देख रहे हैं और अभी तक चीजें दुरुस्त नहीं हो पाई हैं। हमारे नीति-नियंताओं ने बैंकों के बचाव का रास्ता चुना। केंद्रीय नियोजन प्रणाली के औजारों का इस्तेमाल नई तरह की फर्मों से मिल रही प्रतिस्पर्धा को बाधित करने के लिए किया गया।

नीति-नियंता चाहते हैं कि 'फिनटेक कंपनियां' बैंकों की सेवा प्रदाता बनकर ही रहें, और मुख्य व्यवसाय और लाभ बैंकों के साथ ही हो। भारतीय बैंकिंग के अफसरशाही चरित्र और बैंकिंग में उत्पादों एवं प्रक्रियाओं पर सरकारी नियंत्रण की वजह से भारत में बैंक संरचनात्मक रूप से खोज की प्रक्रिया में जुड़ने में अक्षम ही हैं। 'नवाचार' 'जोखिम लेना' और 'विफलता' जैसे शब्द हमारे बैंकों और उनके आकाओं को पसंद नहीं आते।

भारतीय गैर बैंकिंग कंपनियां समय और जोखिम की ऐसी समस्याओं को समाधान करने में बेहतर तरीके से उभरी हैं जिनका सामना हमारे परिवारों और कंपनियों को करना पड़ता है। यहां नए फिनटेक खिलाड़ियों की भूमिका हो सकती थी। लेकिन इस प्रक्रिया को तीन अड़चनों का सामना करना पड़ा। भारतीय बॉन्ड बाजार की सीमाएं एनबीएफसी के वित्तपोषण के रास्ते में अड़चन हैं, आमतौर पर नीति-नियंताओं ने राज्य की ताकत का इस्तेमाल एनबीएफसी की कीमत पर बैंकों को बचाने में किया है और केंद्रीय नियोजन प्रणाली एनबीएफसी के उत्पादों और प्रक्रियाओं पर उसी तरह से नियंत्रण रखने लगी है जैसा कि वह बैंकों के साथ करती है।

सफल बाजार अर्थव्यवस्था की पहचान यह है कि कंपनियों के प्रमुख व्यक्ति मुख्यतः ग्राहकों, प्रौद्योगिकी और संगठन निर्माण पर ध्यान केंद्रित करते हैं। 1990 के दशक में हुए आर्थिक सुधारों का उद्देश्य यह था कि कंपनियां सरकार पर ध्यान केंद्रित करने से हटकर यह सीखें कि मजबूत कैसे बनना है।

आज के दौर में हम जिस भारत में है उसमें भी वित्तीय कंपनियां प्राथमिक रूप से सरकार पर ध्यान केंद्रित कर रही हैं। सरकार और उसकी एजेंसियां उत्पादों, प्रक्रियाओं और अनिवार्य राष्ट्रीय चैंपियनों के बारे में बहुत कुछ तय करती हैं। कई पहलुओं में तो कीमतों पर भी नियंत्रण रखा जाता है। ऐसे में हर वित्तीय कंपनी का काम एक हद तक किसी बड़े सार्वजनिक क्षेत्र प्रणाली की एक शाखा की तरह ही होता है जिसमें बुनियादी निर्णय ऊपर से लिए जाते हैं।

ऊपर से आए डिजाइन के कवच में ऐसी खामियां होती हैं, जिन पर कंपनियों को सोचने के लिए गुंजाइश बनती है।

क्या ये प्रयोग करने, नवाचार करने और प्रौद्योगिकी का बेहतर उपयोग करने तथा उपयोगकर्ताओं को जोखिम और समय की मूलभूत समस्याओं पर सेवा प्रदान करने के बारे में नए विचार लाने के अवसर प्रदान करते हैं? इससे कानून के शासन और राष्ट्रीय चैंपियनों को लेकर समस्याएं खड़ी हो जाती हैं। नियामकों के मौजूदा कामकाज को देखें तो किसी कंपनी को नुकसान पहुंचाया जा सकता है, अगर सरकारी एजेंसियों के भीतर बैठे लोग ऐसा करने का निर्णय लेते हैं। वित्तीय एजेंसियों के भीतर बैठे लोगों के पास मनमानी शक्ति होती है। यहां कानून का शासन एक ऐसी दुनिया है जहां के कानून ज्ञात हैं, जांच या अभियोजन शुरू करने की विवेकाधीन शक्ति पर रोकथाम रहती है, एक उचित संरचना वाली अर्ध-न्यायिक सुनवाई होती है, तर्कसंगत आदेश सार्वजनिक होते हैं, आदेश गलत तरीके से कमाए गए लाभ की भयावहता को दिखाता है और उसी के अनुपात में जुर्माना लगता है, और इन आदेशों के खिलाफ भी अपील की जा सकती है। लेकिन ज्यादातर सुरक्षा उपाय कमजोर तरीके से काम करते हैं; एजेंसी के लोग किसी कंपनी को अपनी इच्छा के मुताबिक नुकसान पहुंचा सकते हैं या नष्ट कर सकते हैं।

यह फर्मों को अलग रास्ता अपनाने को मजबूर करता है। जब कोई नया विचार आता है, तो पहले ही एजेंसियों के शक्तिशाली लोगों से अनुमति ले लेना सुरक्षित माना जाता है। जब कोई कंपनी इस इलाके को सफलतापूर्वक पार कर लेती है और कुछ नया करने जाती है तो भी उसके कारोबारी मॉडल के सामने कई तरह के खतरे बने रहते हैं। केंद्रीय नियोजन प्रणाली किसी सफल कारोबार मॉडल को बाधित कर सकती है, या कोई राष्ट्रीय चैम्पियन सामने आकर सारे निजी फर्मों को बेदखल कर सकता है।

वित्त सभी उद्योगों में सबसे अहम है। यह 'अर्थव्यवस्था का मस्तिष्क' है। फिनटेक क्रांति भारत के लिए बहुत कुछ कर सकती है। लेकिन इसके लिए जरूरत इस बात की है कि वित्तीय आर्थिक नीति की मौजूदा व्यवस्था में बदलाव किया जाए।

(लेखक एक्सकेडीआर फोरम में शोधकर्ता हैं)

नीतियां बदलें तो लौटे 'पीली क्रांति' की चमक

खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता हासिल करना केंद्र में सत्ता में आने वाली हर सरकार का प्रमुख एजेंडा रहा है, परंतु इस दिशा में कुछ खास प्रगति नहीं हुई है। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने भी इस साल अपने अंतरिम बजट भाषण में खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता के लिए रणनीति तैयार करने की प्रतिबद्धता जताई है। उन्होंने इस बारे में 2019 में भी कुछ ऐलान किए थे, लेकिन स्थानीय स्तर पर खाद्य तेलों के उत्पादन और खपत का अंतर लगातार बहुत तेजी से बढ़ रहा है। नतीजतन आयात पर निर्भरता बढ़ती जा रही है और अब यह 60 फीसदी तक हो गई है। खाद्य तेलों के उत्पादन में जहां 2.2 फीसदी की वार्षिक वृद्धि हुई है, वहीं खपत में बढ़त इससे लगभग दोगुनी 4.3 फीसदी पहुंच गई है। यही वजह है कि जहां 1980 के दशक के मध्य में 15 लाख टन तेल विदेश से खरीदा जाता था, अब धीरे-धीरे यह मात्रा बढ़कर अक्टूबर 2023 में समाप्त तेल वर्ष 2022-23 में रिकॉर्ड 1.67 करोड़ टन तक पहुंच गई, जिसकी कीमत लगभग 1.38 लाख करोड़ रुपये होती है। नियमित आधार पर भी देखें तो प्रति वर्ष औसतन 1.5 करोड़ टन खाद्य तेल आयात किया जा रहा है, जो कच्चे तेल और सोने के बाद आयात की जाने वाली तीसरी सबसे बड़ी वस्तु है।

खाद्य तेल जैसी बड़े स्तर पर उपभोग की जाने वाली वस्तु के लिए आयात पर निर्भरता खास तौर पर यह जानते हुए कि पाम तेल और इससे जुड़े उत्पाद केवल दो देशों इंडोनेशिया और मलेशिया से ही आते हैं, न तो उचित है और न ही आर्थिक दृष्टि से टिकाऊ है। इन दोनों देशों से किसी भी समय और किन्हीं भी कारणों से यदि आपूर्ति में बाधा उत्पन्न हुई तो बड़ी समस्या खड़ी हो सकती है, जिससे निपटना आसान नहीं होगा।

निःसंदेह शहरीकरण के विस्तार, जनसंख्या में वृद्धि और आमदनी बढ़ने जैसे कारकों के साथ-साथ लोगों की भोजन की आदतों में व्यापक बदलाव आने के कारण खाद्य तेलों की मांग और आपूर्ति के अंतर की खाई चौड़ी होती जा रही है, लेकिन इसका सबसे बड़ा कारण सरकार की गलत मूल्य नीति है। यह नीति उत्पादकों के हित को नजरअंदाज कर उपभोक्ताओं को ध्यान में रखकर बनाई जाती है। खाद्य तेलों की कीमतों में मामूली सी बढ़ोतरी होने पर सरकार तिलहन एवं तेल की भंडारण सीमा, आयात शुल्क में कटौती और आयात पर तमाम प्रोत्साहन जैसे तरीके अपना कर फौरन हस्तक्षेप कर देती है। मूल्य संतुलन के लिए सरकार द्वारा उठाए जाने वाले ऐसे कदमों से किसान तिलहन की फसलों से मुंह मोड़ने लगते हैं अथवा उन चीजों पर निवेश बढ़ा देते हैं, जिनसे उन्हें अधिक लाभ हो। खाद्य तेलों पर बहुत कम आयात शुल्क (मौजूदा समय में केवल 5.5 फीसदी) दूसरे देशों के तिलहन उत्पादकों के हित में होता है। इसका सीधा नुकसान अपने देश के किसानों को उठाना पड़ता है।

खेती बाड़ी
सुरिंदर सूद

दरअसल, सरसों, मूंगफली, तिल, सोयाबीन और सूरजमुखी जैसे खाद्य तेलों के उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के लिए वित्त मंत्री द्वारा तैयार की गई रणनीति में उच्च उत्पादन वाली किस्मों के लिए शोध पर जोर, आधुनिक तकनीक से खेती करना, बाजारों को एक-दूसरे से जोड़ना, खरीद बढ़ाना और फसल बीमा जैसे तरीके अपनाना शामिल हैं, लेकिन इनमें से कोई भी कदम नया अथवा नवोन्मेषी नहीं है। इनमें से अधिकांश पहले ही आजमाए जा चुके हैं। उपयुक्त मूल्य निर्धारण नीति नहीं होने के कारण इन उपायों का कोई खास फायदा नहीं हुआ। तिलहन का उत्पादन बढ़ाने में प्रौद्योगिकी कोई बड़ी बाधा नहीं है। पहले से उपलब्ध तकनीक के जरिये खेतों में किसानों द्वारा उत्पादित फसलों और शोध फार्मों में उगाई फसलों की उत्पादकता में दिखाई देने वाले बड़े अंतर से इसका अंदाजा लगाया जा सकता है।

हाल ही में नैशनल एकेडमी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज द्वारा खाद्य तेलों पर लाए गए पॉलिसी पेपर (संख्या 122) के अनुसार विभिन्न खाद्य तेलों की वास्तविक और प्राप्य उपज में अंतर औसतन 60 फीसदी तक है। यह अंतर तिल में 22 फीसदी से लेकर कुसुम में 80 फीसदी तक है। मूंगफली, सोयाबीन और सरसों जैसे प्रमुख तिलहन के मामले में उपज का अंतर 25 से 50 फीसदी तक है। यदि उपज के अंतर को 20 फीसदी तक कम कर लिया जाए तो तिलहन का वार्षिक उत्पादन 1.3 से 1.4 करोड़ टन तक बढ़ाया जा सकता है।

वर्ष 1990 के दशक के शुरू में खाद्य तेलों के मामले में भारत आत्मनिर्भरता के करीब पहुंच गया था। इसका श्रेय 1986 में स्थापित तिलहन प्रौद्योगिकी मिशन को जाता है, क्योंकि इसे तिलहन के आयात, निर्यात और घरेलू कीमतें निर्धारित करने से संबंधित नीतियां बनाने और उन्हें लागू करने की पूरी छूट दी गई थी।

तिलहन प्रौद्योगिकी मिशन ने तिलहन और खाद्य तेलों की कीमतों को दबाव से मुक्त कर दिया था। इससे उपभोक्ता और उत्पादक दोनों के हितों की रक्षा हुई और उन्हें इससे लाभ हुआ। आयात शुल्क और मार्केटिंग प्रतिबंधों के जरिये सरकार ने उसी स्थिति में कीमतों पर अंकुश लगाने के लिए हस्तक्षेप किया जब ये एक तय दायरे से बाहर जाने लगीं। इस रणनीति के साथ-साथ खेती में बेहतर प्रौद्योगिकी के प्रयोग से न केवल तिलहन का बोआई रकबा बढ़ा, बल्कि उत्पादन में भी खासी वृद्धि हुई। यही रणनीति 'पीली क्रांति' के नाम से विख्यात हुई। दुखद बात यह कि तिलहन प्रौद्योगिकी मिशन की स्वायत्तता और नीतियां बनाने की शक्तियों में कटौती कर दी गई और इस पर अन्य जिम्मेदारियां थोप दी गईं। नतीजतन इसका जोर तिलहन से हट गया और इसकी नीतियों-रणनीतियों से तिलहन उत्पादन और खाद्य तेलों के मामले में जो लाभ मिलने शुरू हुए थे, वे धीरे-धीरे कम होते गए।

जैसी रणनीति और नीतियां तिलहन प्रौद्योगिकी मिशन ने तैयार की थीं, खाद्य तेलों में आत्मनिर्भर बनने के लिए फिर वैसे ही कदम उठाने होंगे। खूब सोची-विचारी कीमतों और वाह्य व्यापार नीतियों के जरिये तिलहन उत्पादन को आर्थिक रूप से लाभदायक फसल बनाकर ही खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता के लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है।

आपका पक्ष

विज्ञान की तरफ और गंभीरता जरूरी

28 फरवरी को राष्ट्रीय विज्ञान दिवस मनाया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य देश में छात्रों के साथ-साथ आम लोगों की विज्ञान के प्रति रुचि बढ़ाना है। हमारा देश विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ रहा है। हाल में चंद्रयान 3 की सफलता के यह मायने और इस सफलता ने दुनिया को बता दिया कि हमारा देश विज्ञान के क्षेत्र में भी काफी विकास कर रहा है और हमारे देश के वैज्ञानिक भी दूसरे देशों जैसे अमेरिका, चीन आदि उन देशों से कम नहीं है, जो तकनीक और विज्ञान के क्षेत्र में खुद को सुपर पावर मानते हैं। भारत ने भी विज्ञान के क्षेत्र में बहुत तरक्की की है। अगर सरकार विज्ञान की पढ़ाई को देश में दुरुस्त करने के लिए गंभीरता दिखाए तो हमारा देश विज्ञान के क्षेत्र में दुनिया के सभी देशों को पीछे छोड़ देगा। बहुत से भारतीय मूल के वैज्ञानिक दूसरे देशो में जाकर अद्भुत कारनामे कर रहे हैं। भारत में कई प्रतिभाशाली युवा आर्थिक तंगी के

चंद्रयान 3 की सफलता ने दुनिया को बता दिया कि भारत विज्ञान के क्षेत्र में भी काफी विकास कर रहा है

कारण विज्ञान की पढ़ाई नहीं कर पाते और सरकारी शिक्षा संस्थानों की विज्ञान प्रयोगशालाएं और इनसे जुड़ी अन्य तकनीक आधुनिकता को तरसती रहती हैं। कुछ युवा विज्ञान की पढ़ाई में रुचि, जो मुख्य रूप से नॉन मेडिकल की होती है, नहीं दिखाते है क्योंकि उन्हे यह उम्मीद नहीं होती कि विज्ञान की पढ़ाई के बाद उन्हें आगे बढ़ने या फिर विज्ञान के क्षेत्र में कुछ नया कर दिखाने का मौका मिलेगा। सरकार को चाहिए कि वह विज्ञान की पढ़ाई को लेकर गंभीरता दिखाए और जो युवा विज्ञान के क्षेत्र में कुछ कर दिखाना चाहते है उनकी हरसंभव मदद करे ताकि विज्ञान की पढ़ाई करने वालों की संख्या बढ़े और उन्हें विदेश का रुख न करना पड़े। मौजूदा समय में रूस और यूक्रेन के बीच युद्ध चल रहा है। मिसाइलों और परमाणु बम के खतरे को देखते हुए वैज्ञानिकों को ऐसे हथियारों को बनाने से गुरेज करना चाहिए।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

रेलवे का आधुनिकीकरण मगर सेवाएं लचर

हाल में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 41,000 करोड़ रुपये की 2,000 से अधिक रेल बुनियादी ढांचा परि-योजनाओं की आधारशिला रखी। इन परियोजनाओं में कई रेलवे स्टेशनों का पुनर्विकास, सड़क ओवरब्रिज तथा अंडरब्रिज का निर्माण शामिल है। नई रेल लाइनों के साथ पुरानी लाइनों का भी पुनर्विकास भी किया जाएगा। रेलवे 1,321 स्टेशनों को दोबारा विकसित करेगा। इन सब के बावजूद रेल यात्रियों को विभिन्न खंडों में यात्री सुविधाओं के अभाव से जूझना पड़ता है। रेलवे आरक्षण प्रणाली में सुधार की जरूरत है जिससे लोगों को कन्फर्म टिकट मिल सके। कोविड के दौरान लॉकडाउन से रेलवे का परिचालन बंद हो गया था। इसके बाद जब दोबारा परिचालन शुरू हुआ तो किराये में लगभग दोगुनी बढ़ोतरी की गई। अब किराये कम करने की जरूरत है। कई एक्सप्रेस ट्रेनों को सुपरफास्ट बना दिया गया और किराया भी बढ़ा दिया गया जबकि उस ट्रेन का परिचालन समय और स्टेशनों पर रुकने की संख्या वही है। रेलवे सार्वजनिक परिवहन सेवा है और देश के नागरिकों के लिए इसे सस्ता बनाने की जरूरत है।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

थाईलैंड के उप प्रधानमंत्री सह विदेश मत्री पर्णप्री बहिद्ध-नुकारा (दाएं) ने नई दिल्ली में मंगलवार को विदेश मंत्री एस जयशंकर से मुलाकात की। भारत-थाईलैंड की 10वीं संयुक्त आयोग की बैठक में दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय संबंधों पर चर्चा हुई।